# लीला-विहार-माधुरी

**ग्रन्थरत्नत्रय**

## श्रीलीला विंशति
(श्रीरूपरसिक देवाचार्यजी कृत)

## श्रीनित्यविहार पदावली
(श्रीरूपरसिक देवाचार्यजी कृत)

## श्रीयुगल रस माधुरी
(श्रीरसिक गोविन्ददेवजी कृत)

• प्रकाशक •

**'श्रीराधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थान**
**श्रीवृन्दावन धाम**

# ग्रन्थ सूची


| | |
|---|---|
| श्रीलीला विंशति | 11 |
| श्रीनित्यविहार पदावली | 55 |
| श्रीयुगल रस माधुरी | 81 |



**सम्पादक :**

डॉ. अच्युत लाल भट्ट, वृन्दावन

**प्रकाशक :**

श्रीराधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थान, श्रीधाम वृन्दावन

**न्योछावर :** सप्रेम पाठ

**मुद्रण—संयोजन :**

चित्रलेखा, बागबुन्देला, लोई बाजार, वृन्दावन—281121, दूरभाष : 0565-2442415

# सम्पादकीय

## रसिक कृपाल मोकौं देहु नव कुंजनि तटी

श्रीप्रियालाल का नित्य विहार सर्वोपरि, महनीय, कमनीय एवं वरणीय तत्त्व है। जिसका निरूपण सविशाल वाणी साहित्य में हुआ है। इसमें श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी की श्रीमहावाणी; स्वरूप, सिद्धान्त एवं प्रामाण्य तीनों ही दृष्टियों से अति सम्मान्य रही है। 'श्रीमहावाणी' के प्रचार–प्रसार के साथ जो एक नाम अभिन्न रूप से जुड़ा है वह है श्रीरूप रसिक देवाचार्यजी का। जनश्रुति के अनुसार श्रीरूपरसिकदेवजी दाक्षिणात्य ब्राह्मण थे। जिनके जन्म समय, स्थान एवं माता–पिता के विषय में प्रामाणिक ऐतिहासिक तथ्य अभी तक अज्ञात ही हैं। तथापि साम्प्रदायिक जनश्रुतियों के आधार पर ये 'पिल्लई' नामक ग्राम के निवासी थे जो वहीं केवल तमिलनाडु एवं कर्नाटक के संगम पर स्थित रहा होगा। उनका परिवार कुछ समय पूर्व उत्तरभारत में राजस्थान में आ बसा था। ये दो भाई थे। इनका घर का नाम था रामचन्द्रन एवं बड़े भाई का नाम था गोपालन। बाल्यकाल से ही श्रीराधाकृष्ण एवं वृन्दावन की महिमा से परिचित संस्कारित रामचन्द्रन के मन में वृन्दावन ही नहीं वहाँ के नित्यविहार दर्शन की भी तीव्र उत्कण्ठा थी। वे न तो शास्त्रों के दुर्गम अरण्य में भ्रमित होना चाहते थे और न ही गृहस्थ जीवन के पंक में धंसना चाहते थे। उनका अपने शास्त्र विपश्चित् पिता से बार–बार यही प्रश्न था – "पिताजी ! क्या भगवान् श्रीकृष्ण का रासविलास श्रीधाम वृन्दावन में अब भी होता है। उत्तर में हर बार पिता का अभ्युपगम (स्वीकृति) एवं व्याख्यान उनके हृदय में नई–नई जिज्ञासाओं एवं पुंखानुपुंख विचार सरणि को खोल देता था। फलतः रसोपासना के विविध आयामों एवं शाखा प्रशाखाओं के विषय में उनकी ज्ञानपिपासा एवं निष्ठा बढ़ती गई। एवं भक्तिलता साधन एवं विचार द्वारा बद्धमूल हो गई। कभी उन्हें श्रीनिम्बार्काचार्यकृत प्रातःस्मरण स्तोत्र की एक प्रति प्राप्त हुई। जिसमें दिव्य केलिरस में स्नात नित्य युगल की अंग–प्रत्यंग माधुरी ने उन्हें विभोर कर दिया। रसवश उनका गृह छूट गया और चरण चल पड़े वृन्दावन

की ओर। इस समय तक श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी की कीर्ति–सुरभि राजस्थान में भी सर्वत्र व्याप्त थी। श्रीहरिव्यासजी से मिलने की उत्कण्ठा में बहुत लोगों से उनका पता पूछा। परन्तु निश्चित पता कहीं नहीं मिला। तीर्थ भ्रमण करते हुए वे चटथवल ग्राम में देवी के मठ में पहुँचे। वे देवी वही थीं जिनके मठ में कभी श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी संत–मण्डली के सहित विश्राम करने के लिए रुके थे। वहाँ मन्दिर में बकरे की बलि की तैयारी देखकर ग्लानि से इन्होंने भोजन नहीं किया। इस भागवतापराधमार्जन के लिए देवीजी ने स्वयं प्रकट हो उनसे वैष्णवी दीक्षा ग्रहण करने की प्रार्थना की। स्वयं के साथ ग्राम के मुखिया एवं ग्रामवासियों को भी श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी से वैष्णवी दीक्षा ग्रहण करवायी एवं पशुबलि का सर्वदा के लिए निषेध कर दिया। इस घटना का स्मरण श्रीनाभादासजी ने भक्तमाल में भी किया है–

**श्रीभट्ट चरन रज परस कैं सकल सृष्टि जाकौ नई।**
**श्रीहरिव्यास तेज हरि भजन बल देवी कौं दीच्छा दई।।**

*भक्तमाल छप्पय–७७*

अस्तु श्री रामचन्द्रन (श्रीरूप रसिक देव जी) की उत्कण्ठा देख देवीजी ने उनसे कहा–

**कौण ठाँव जग जहाँ न श्रीहरिव्यास निवासाँ**
**हरिसम जहाँ के छिदे मांझ वसता हरिव्यासाँ।**
**युगलरूप श्रीसर्वेश्वर का जो जहा ध्यावाँ**
**सो हरि व्यासी दरसण का सुख सहजै पावाँ**

सुतरां श्रीदेवीजी का तात्पर्य था–"हरि के समान श्रीहरिव्यास सर्वव्यापी हैं। वे सम्पूर्ण अनुयायी भक्तों के हृदय के अन्दर अलक्षित (छिपे) रूप में निवास करते हैं। अर्थात् वे नित्यलीला में पुनः प्रवेश कर चुके हैं।" देवी जी से आदेश पाकर वे मथुरा स्थित नारद टीला पर पधारे। जब श्रीहरिव्यास देवाचार्य के दर्शन के लिए वे अत्यन्त विकल हो गये तो उन्हें धैर्य देने के लिए श्रीहरिव्यास देवाचार्य स्वयं कृपाकर निकुंज से पुनः आचार्य रूप में साक्षात् प्रकट हुए। उन्हें 'रूप–रसिक' इस यथार्थ नाम से सम्बोधित किया तथा आचार्यवर्य ने पंच संस्कारपूर्वक उन्हें दीक्षा प्रदान की तथा कृपा करके अपने अभिन्न रूप, गूढ़ प्राणधन श्रीमहावाणीजी उन्हें प्रदान की। श्रीमहावाणीको जो अभी तक गोपनीय थी, योग्य अधिकारियों

में प्रचारित करने का आदेश देकर श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी पुनः नित्यविहार लीला में प्रविष्ट हो गये। रामचन्द्रन अब 'रूप रसिक' हो गए थे।

श्रीहरिव्यास देवाचार्य ने अपने प्राकट्य काल में बारह प्रधान शिष्यों को कृपा प्रदान की। ये सभी गौड़ ब्राह्मण शिष्य थे। इनके अतिरिक्त दो शिष्य और हुए। श्रीचण्डिकाजी (देवीजी) एवं श्रीरूप रसिक देवाचार्यजी। चण्डिका जी उनके वैष्णवीय सदाचार तप एवं महिमा की वाहक बनीं एवं श्रीरूप रसिक देवाचार्य उनकी प्रमुख कीर्ति एवं कृपाविग्रह 'श्रीमहावाणीजी' के संवाहक बने।

यह माना जाता है कि श्रीभट्टजी की आदिवाणी का ही महाभाष्य श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी की श्रीमहावाणी है। वहीं रूप रसिकजी का काव्य साहित्य श्रीमहावाणीजी का ही सरस व्याख्यान है। इस प्रसंग में उल्लेखनीय है–श्रीरूपरसिक देवाचार्य के चार ग्रन्थ प्राप्त होते हैं।

(१) श्रीहरिव्यास रसामृत सिन्धु, (२) बृहदुत्सव मणिमाला, (३) लीला विंशति (४) नित्यविहार पदावली।

इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

## (1) श्रीहरिव्यास रसामृत

इसमें सद्‌गुरु को भगवत्स्वरूपात्मक स्थापित करते हुए जीव ईश्वर में द्वैताद्वैत सम्बन्ध सुस्पष्ट किया गया है। इस ग्रन्थ में बाईस लहरियाँ हैं। जिनमें श्रीहरिव्यास जी के काव्य एवं उपासना का वैशिष्ट्य वर्णित है।

## (2) बृहदुत्सव मणिमाला

इसमें बसंत पंचमी से व्यंजन द्वादशी (मार्गशीर्ष शुक्ल १२) तक के वर्षोत्सवों का नाना रागरागिनियों में गायन है। इसमें २६६४ छन्द हैं। इसमें श्रीराधाकृष्ण की निकुंज व्रजलीला सम्बन्धी लीला एवं शोभा का भी वर्णन है। प्रमुखतः श्रीमहावाणीजी के उत्साह सुख के अनुरूप उत्सवादि का ही यहाँ वर्णन है।

## (3) लीला विंशति

यह प्रमुखतः श्रीमहावाणीजी के सिद्धान्त सुख पर आधारित है। इसके ४ भाग हैं।

अ. पंच मंजरी – मन शिक्षा, रस, रसिक, रंग एवं प्रेम

ब. पंच विलास – नव, भावना, नित्य, रति एवं फूल

स. पंच माधुरी – नाम, माधुर्य, वृन्दावन, सिद्धान्त एवं हरिभक्ति

द. पंच सुख – सार, सनेह, स्वरूप, सुहाग एवं होरी

इस ग्रंथ का रचनाकाल बृन्दावन माधुरी के अंतिम दोहे के अनुसार अगहन शुक्ल २ विक्रम सं. १५८७ है।

**पन्दरा सै सत्यासिया मासोत्तम आसोज।**
**यह प्रबंध पूरौ भयौ सुकला शुभदिन द्योज।।**

इस ग्रन्थ में सिद्धान्त माधुरी ब्रजभाषा गद्य में लिखी गई है। भाषा में कहीं–कहीं राजस्थानी की झलक भी है। यह ग्रन्थ वि. सं. २००१ में आदि नारायण मंदिर उज्जैन से महन्त बद्रीदासजी के सौजन्य से प्राप्त हुआ था एवं सं. २१२५ में बाबा माधुरीदासजी द्वारा प्रकाशित हुआ था।

## (4) नित्यविहार पदावली

यह शुद्ध नित्य विहार सम्बन्धी ग्रन्थ है जिसमें श्रीमहावाणी जी के सुरत सुख एवं सहज सुख की सिद्धान्त पद्धति को अपनाया गया है। इसमें गम्भीर गोपनीय रसोल्लास का वर्णन है। ग्रन्थ में १२० पदों का विभिन्न रागरागिनियों में संकलन किया गया है।

इन सभी ग्रन्थों में श्रीरूपरसिकजी का रस–साधक स्वरूप ही प्रकट हुआ है। श्रीकिशोरीअलीजी ने श्रीरूप रसिकजी की साधनात्मक उपलब्धियों के विषय में अपने भाव इस प्रकार व्यक्त किये हैं–

निगम अगोचर राधा अराधन लह्यौ
सोई निजवानी सौ नीकी विधि कह्यौ।।
कही बानी सुरस सानी व्रज विपिन रस सौ अटी
प्रिया प्रीतम पाइबे की मनौ निर्मित शुभ वटी।।
कहनी रहनी एक सी जगमगत जग सोहै छटी
सो रूप रसिक कृपाल मोकौं देहु नव कुंजनि तटी।।

संक्षेप में श्रीरूप रसिक जी के सम्पूर्ण साहित्य का सिद्धान्त–पक्ष एवं रस–प्रेरणा श्रीमहावाणीजी के 'नित्यविहार' पर आधारित है।

## श्रीयुगलरस माधुरी

श्रीयुगलरस माधुरी श्रीरसिक गोविन्ददेवजू की एक संक्षिप्त तथा मधुर कृति है। श्रीरसिक गोविन्द का जन्म जयपुर के नाटाणी गोत्रीय खण्डेलवाल वैश्य परिवार में हुआ था। यह परिवार कला एवं प्रतिभा के साथ–साथ सम्पन्न प्रतिष्ठित परिवार था। परन्तु बाद में महाराजा माधोसिंह प्रथम (सं. १८०७–१८२४ वि.) के समय इनके पूर्वज हरगोविन्द नाटाणी एवं हरनारायण नाटाणी किसी कारण राजदण्ड से दण्डित हुए एवं कुछ समय परिवार का प्रायः राजपरिवार से सम्बन्ध विच्छेद हो गया।

गोविन्दानन्दघन (रचयिता श्रीरसिकगोविन्द) के अनुसार ये जयपुर के शाह जादौदास के पौत्र एवं श्रीशालिग्राम जी के द्वितीय पुत्र थे। इनके बड़े भाई श्रीबालमुकुंद जयपुर महाराजा के दीवान थे।

**जादौदास शाह कौ सपूत सालिग्राम सुत नाटानी बालक मुकुंद कहायौ है**
**जयपुर बसैया विलसैया कोक कात्यनु कौ, ताकौ लघु भैया श्रीगोविन्द कवि गायौ है**

–गोविन्दानंद घन–रसिक गोविन्द

इनका प्रारम्भिक समय जयपुर में ही व्यतीत हुआ, पारिवारिक सम्पत्ति क्षीण होने पर ये वैराग्य भाव धारण कर जयपुर त्यागकर वृन्दावन आ बसे एवं वहाँ इन्हें परम शान्ति अनुभव हुई। तत्पूर्व ये श्रीसर्वेश्वर शरण देव (निम्बार्क सम्प्रदाय आचार्यपीठ सलेमाबाद पीठ भोग काल

सं. १८४१ से १८६६ वि. तक) से दीक्षित हो चुके थे। जयपुर नरेश महाराजा प्रतापसिंह 'ब्रजनिधि' (सं. १८३५–१८६० वि.) जी की श्रीरसिकगोविन्द जी से मित्रता थी। श्री ब्रजनिधि जी की सर्वेश्वरशरण देवजी के प्रति उनके अद्वितीय भागवत–प्रवचनों के कारण अपूर्व श्रद्धा थी। श्रीसर्वेश्वरशरणजी परशुराम देवाचार्य (सलेमाबाद–राजस्थान) निम्बार्कपीठ के छठे आचार्य थे। सर्वेश्वर पत्रिका (भक्तगाथा अंक) के अनुसार कभी जयपुर नरेश ब्रजनिधि जी ने श्रीरसिक गोविन्दजी से कहा "चलो श्रीसर्वेश्वर शरण देवाचार्यजी की कथा हो रही है" तो रसिक गोविन्दजी ने पहले तो टाल दिया, फालतू समय नहीं है। श्रीब्रजनिधिजी ने कहा – "कविराज ! आप भाषण बहुत अच्छा देते हैं। बाद में उन्हीं के आग्रह पर (रसिक) गोविन्द कवि भी श्रीसर्वेश्वर शरण देवाचार्यजी से मिले एवं उनसे प्रभावित हो उनसे दीक्षा ग्रहण की। उन्होंने अपने दीक्षा गुरु के साथ आदिगुरु श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी की वंदना अनेक स्थलों पर की है–

(i) श्रीगुरु श्रीहरिव्यास देव कै शरणै आयौ (युगल रस माधुरी १६०)

(ii) श्रीगुरु श्रीहरिव्यास वृंदाविपिन लहै न कोई (वही १६२)

(iii) जय जय श्रीहरिव्यास देव दिन विदित विभाकर (वही १)

श्रीगुरुदेव एवं श्रीधाम रसिकों के संग से उन्होंने अपने नाम के साथ उल्लास पूर्वक "रसिक" "अली" "सखी" "अलि रसिक" विशेषणों का प्रयोग किया है। पूर्व रसिकों की रहनी को जीवन में उतारा –

**शृंगार प्रेमरस सरस पुनि, कालकर्म उन कछु उर न।**
**दम्पत्ति विहार गोविन्द अलि जय जंय श्रीवृन्दाविपिन।।**

श्रीरसिक गोविन्ददेवजी सुकवि काव्यशास्त्र के मर्मज्ञ एवं निकुंज रसरीति के उपासक थे। उनमें श्रीवृन्दावनीय 'रसिक–उपासना' सुकवि रसधारा एवं काव्य–शास्त्रीय सर्वांग निरूपक 'आचार्यत्व' की त्रिवेणी संगम प्राप्त होता है। उन्होंने अनेक लोगों को काव्य शिक्षा प्रदान की एवं पाठनार्थ ग्रंथ लिखे। यथा सं. १८८६ वि. में वे वृन्दावन से काशी गए वहाँ उनका सम्पर्क कान्यकुब्ज ब्राह्मण लक्ष्मण से हुआ। उनके लिए इन्होंने 'लक्ष्मण–चन्द्रिका' ग्रन्थ लिखा जिसमें 'गोविन्दानंदघन' नामक ग्रन्थ के प्रस्तुत लक्षणों का संक्षेप संग्रह है। 'गोविन्दानंदघन' ग्रन्थ से

ज्ञात होता है इन्होंने अपने भतीजे श्रीनारायण एवं श्रीगोविन्दराम को काव्य शिक्षा प्रदान करने के लिए इस ग्रंथ की रचना की। रामायण सूचनिका, कलियुग रासो, अष्टदेश भाषा, पिंगल ग्रन्थ 'रसिक गोविंद–चंद्रिका' आदि भी काव्य शिक्षा एवं काव्य प्रतिभा प्रकाशनार्थ लिखे ग्रन्थ हैं। ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

(१) रामायण सूचनिका (सं. १८५८, ३३ दोहों में अक्षर क्रम से राम कथा, इसे ककहरा रामायण भी कहा जाता है)

(२) कलियुग रासो (सं. १८६५, कलिकाल का वर्णन भतीजे गोविन्दराम को शिक्षार्थ लिखा ग्रन्थ)

(३) अष्टदेश भाषा – व्रज, खड़ी बोली, ढुंढारी, पंजाबी, आदि आठ भाषाओं में श्रीराधाकृष्ण का शृंगार वर्णन।

(४) समय प्रबंध – विभिन्न ऋतुओं में युगल विहार का ८५ छंदों में वर्णन।

(५) युगलरस माधुरी – २०१ रोला छन्दों में वृन्दावन विहार का सरस सैद्धान्तिक वर्णन।

(६) पद संग्रह – नित्य रस, रेखता होरी के पद एवं वर्षोत्सव पदों का संग्रह

(७) गोविन्दानन्दघन – (सं. १८५८) काव्य के दशांगों का शास्त्रीय विवेचन परक यह भारी ग्रन्थ है। यह चार प्रबंधों में विभक्त है। गद्य में भी प्रश्नोत्तर हैं। स्वयं लेखक के अनुसार–

**शब्द समूह अगाधि भक्ति, नवनिधि रस छवि देत**
**भरत गोविन्दानन्दघन बरसत रसिकन हेत**

(८) लक्षण चंद्रिका – (१८८६ वि.) गोविन्दानन्दघन ग्रन्थ लक्षणों का संक्षेप

(९) पिंगल ग्रन्थ – छन्द शास्त्रीय लघुरचना

(१०) रसिक गोविन्द – (सं. १८६०) नामान्तर–रसिकगोविन्दचन्द्रिका। 'चंद्रालोक' पद्धतिपर अलंकार शास्त्र की लघु रचना।

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य ग्रन्थों का भी यत्र तत्र उल्लेख प्राप्त होता है–जैसे वैद्यक ज्ञान, फूल बंगला बधाई, चरचरी, सांझी के पद आदि।

इन सब ग्रन्थों में रसभाव सिद्धान्त एवं उपासना की दृष्टि से 'युगल-रस माधुरी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सरस रचना है। यह स्व सुखार्थ रचना है। जिसके अधिकारी चकोर मीन एवं चातक व्रत धारण करने वाले रसिक जन ही हैं। अन्य 'विमुखों' से यह गोपनीय है। यह पर शिक्षा के लिए नहीं है।

**निजसुख हित रस जुगल माधुरी चरित बनायौ।**
**रसिकन हित सौ दियौ विमुख सौ महा दुरायौ।।**

अस्तु श्रीलीला विंशति नित्य विहार पदावली एवं श्रीयुगल रस माधुरी ये तीनों ग्रन्थरत्न रसिकजनों के श्रीहस्त कमलों में समर्पित हैं। इनमें लीलाविंशति एवं नित्य विहार पदावली का पूर्व प्रकाशन सं. २०१५ वि. में श्रीबाबा माधुरीदास जी (वनविहार, वृन्दावन) द्वारा एवं युगल रस माधुरी का प्रकाशन (सन् १९६४ ई.) में श्रीसर्वेश्वर प्रेस, वृन्दावन (संपादक अधिकारी श्रीव्रजवल्लभशरणजी) द्वारा कराया गया था। परन्तु ये ग्रन्थ-त्रय अब सुलभ नहीं हैं। अतः श्रीराधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थान श्रीधाम वृन्दावन ने उन्हें पुनः प्रकाशित कराने का सत्संकल्प लिया। आशा है सुधी पाठकों का स्नेह इस ग्रन्थत्रयी को भी प्राप्त होगा। प्रकाशन सम्पादन में जो त्रुटि-च्युति बनी है उनके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं। ग्रन्थ प्रकाशन में जिन महानुभावों का सहयोग-मनोयोग प्राप्त हुआ उनके प्रति संस्थान कृतज्ञता ज्ञापित करता है प्रमुखतः इस प्रकाशन के प्रेरणाश्रोत रसिक संत प्रवर श्रीजगन्नाथ दास बाबाजी महाराज के श्रीचरणों में हम कृतज्ञ वन्दन अर्पित करते हैं। सुज्ञेषु किं बहुना।

मधुनिकुंज, भट्टगली
श्रीधाम वृन्दावन-281121
श्रीनृसिंह चतुर्दशी, सं. 2059 वि.
दि. 15.05.2003

*डॉ. अच्युतलाल भट्ट*
भागवत भूषण
(सम्पादक)

श्रीमन्निखिलमहीमण्डलाचार्यचक्रचूड़ामणिरसिकराजराजेश्वर

## जगद्गुरु श्रीनिम्बार्कपादपीठाधीश्वर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज

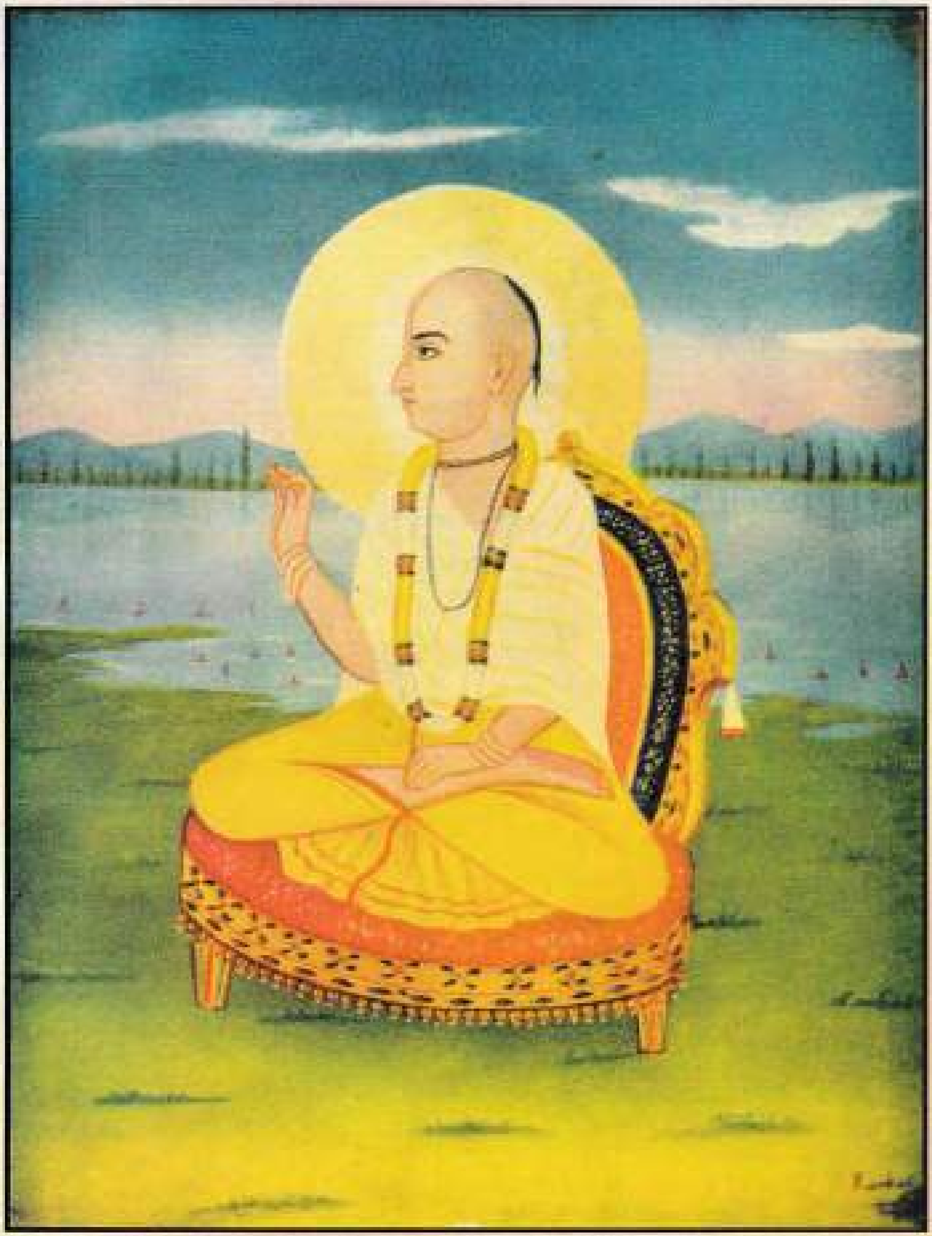

''जय जय श्रीहरिव्यासजू, रसिकन हित अवतार।
महावानी कर सबनि को, उपदेस्यो सुख सार।।''

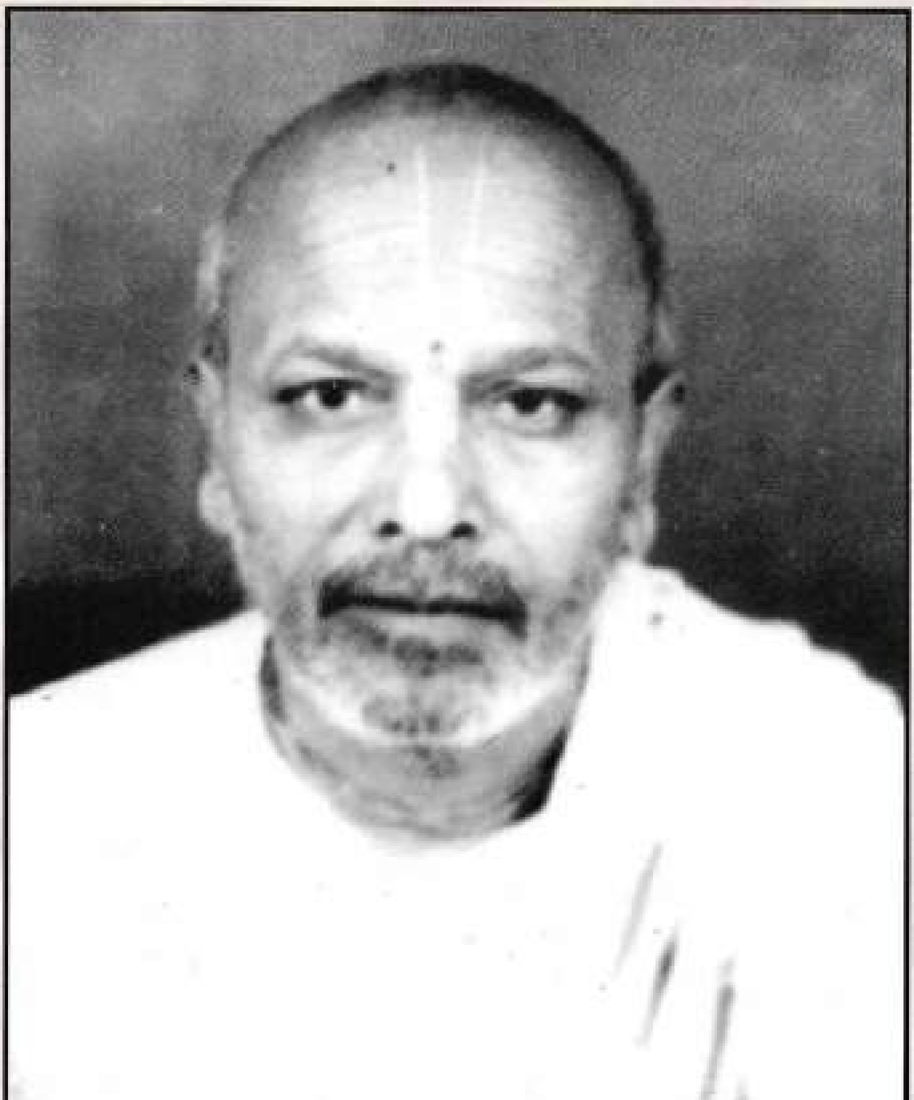

परमपूज्य संत रसिक प्रवर
श्रीजगन्नाथदासजी महाराज

श्रीराधे
श्रीसर्वेश्वरो जयति
श्रीनिम्बार्क महामुनीन्द्राय नमः

श्रीरूपरसिकदेवजू विरचितः

# श्रीलीला विंशति

।।दोहा।।

प्रथम सुमिरि हरिव्यास जू, सकल अर्थ के धांम।
तिन पद-कमलहि वल रचौं, लीला विंशति नांम।।१।।

*।।श्रीहरिव्यासदेवाय नमः।।*

अथ श्रीरूप–रसिक कृत–वांनी। लीला विंशति नाहिं जु छांनी।।
प्यारी प्रीतम गुन गन गांनी। परा भक्ति सांनी सुख खांनी।।१
रसिक–राज–राजेश बखांनी। ताकी महिमा अकथ कहांनी।।
लिखत राधिकादास प्रमांनी। सुनत गुनत दंपति सुखदांनी।।२
श्रीहरिप्रिया चरन शिर धरिकैं। परम सहेली कृपाजु वरिकैं।।
हित अलवेली हित अनुसरिकैं। नित्य नवेली विनती करिकैं।।३
मनमंजरी की कृपा सु पाई। श्रीगौरांगी पद शिरनाई।।
आदि सहेली सकल मनाई। लीला विंशति लिखन कराई।।४
श्रीराधिकादास सुखदाई। रसिक प्रवीन सुनौं चित्त लाई।।
श्रीमत रूपरसिक जू गाई। ताकी को कहि सकै बड़ाई।।५
श्रीवृषभांनु नगर मैं पाई। रूपरसिक वांनी वहु भाई।।
मैं मतिहीन न बहुत समाई। लीला विंशति लई लिखाई।।६
दोहा–जै जै रूप रसिक प्रभो, महाप्रेम रस–रास।
तिन कृत लीला विंशती, लिखत राधिकादास।।७।।

चौपाई– पांच मंजरी पांच विलास।
माधुरी पांच पांच सुख भास।।
या प्रकार विंशति सुखदाई।
भिन्न भिन्न पुनि कहूँ सुनाई।।२
मन शिछ्या रस मंजरि जांनों।
रसिक रंग अरु प्रेम वखांनों।।
मंजरि ये पांचौं शुभ गुनियें।
पंच विलास तथा पुनि सुनियें।।३
नव भावना नित्य रति कहिये।
फूल विलास पांचमौं लहिये।।
अब माधुरी कहत समुझाई।
नामावलि माधुर्य सुहाई।।४
वृंदावन सिद्धान्त भक्ति हरि।
ए माधुरी पांच हिय में धरि।।
पुनि सुख पांच सुनहु वड भागा।
सार सनेह स्वरूप सुहागा।।५
होरी सुख पंचम परिमांनों।
लीला विंशति इंहिं विधि जानों।।
सुनैं गुनैं समुझैं अरु गावैं।
सो निज महल टहल सुख पावै।।६
महल टहल सुख के अधिकारी।
श्रीहरिव्यास युगल तनु धारी।।
सदा सनातन अति अभिरांमा।
हरिव्यास हरिप्रिया सुनांमा।।७

जगत गुरू हरिव्यास सुदेवा।
हरिप्रिया रूप युगल निति सेवा।।
तिनकी चरन शरन जो रहई।
सोई भल या सुख कौं लहई।।८
साधन कोटि करौ किन कोई।
इन पद विन प्रापति नहिं होई।।
तातैं प्रथम सुमिरि मन मैरे।
जो सुख चाहत है वहुतेरे।।९
स्वामिनि श्रीहरिप्रिया मनावो।
तौ या सुखहि निरंतर पावो।।
श्रीहरिव्यासदेव विन ऐसैं।
कोटि उपाय करौ किन कैसैं।।१०
पिय प्यारी को अमित सुख, ताकौ वार न पार।
रूप रसिक हरिव्यास विन, पावत नांहिं लगार।।११

## अथ मन शिछ्या मंजरी

रे मन श्रीहरिव्यास भजि, भजत भली सब होइ।
वृंदावन सुख लहन कौ, और उपाइ न कोइ।।१
जो वृंदावन सुख लह्यो, चाहत हौ मन मित्त।
तौ तू श्रीहरिव्यास के, पद पंकज भज नित्त।।२
जो दुर्ल्लभ सब जक्त में, सो सुल्लभ अनयास।
प्रापति है हैं आइकैं, चिन्तत श्रीहरिव्यास।।३

श्रीहरिव्यास उदार पद, सकल सुखनि को सार।
नैंकु हिये मैं वसतहीं, मिटि सब जात विकार।।४
जै जै श्रीहरिव्यास जू, लीला रूप अपार।
देवी जीव उधार हित, लेत अमित अवतार।।५
श्रीहरिव्यासहि गाइ मन, श्रीहरिव्यास उर धारि।
श्रीहरिव्यास-यश श्रवन सुनि, श्रीहरिव्यास चितारि।।६
जो चाहै विसराम तौ, है तोकों सुख धांम।
कोटि कोटि पातक कटैं, लेत अर्द्ध ही नांम।।७
मत अनेक मैं जिनि भ्रमैं, रहौ आशिरै एक।
रूपरसिक यह नांम की, क्यों न निवाहै टेक।।८
इह मन शिछ्या मंजरि, सुनौं गुनौं सब कोई।
अपनैं इष्ट गुरुत्व मैं, निहचै दृढ़ बुधि होइ।।६

।।इति मन शिछ्या मंजरी।।

## अथ रस मंजरी

मनसा वाचा कर्मना, वंदों श्रीहरिव्यास।
अति दुर्ल्लभ प्रीतम प्रिया, सो सुल्लभ अनयास।।१
रस मैं मगन विहारिनी, दिय पियकैं भुज ग्रींव।
सेज सलोंनी मैं लसैं, सब शोभा की सींव।।२
खिली खिलि रही चांदनी, तैसी ए मृदु हास।
वात करत मैं झरत हैं, फूलन की मनौं रास।।३
रस रगमगे किशोर वर, देत लेत रस दांन।
महा रसिक दोऊ लालची, नागर चतुर सुजान।।४

वेसरि मोती की वनी, वानिक अति छबि देन।
चढ्यो मनहु मन पीय को, अधर सुधा रस लेन।।५
व्रीडा तजि क्रीडा करत, मोहन मिथुन किशोर।
सुखमावर सोहत मनहुं, हंस–हंसिनी जोर।।६
इनिको सहज सुहाग सुख, वरनत वनत न वैंन।
रूपरसिक जो जांनहीं, सो देखत भरि नैंन।।७
रस मंजरि यह जो कही, लही यथामति मोर।
भाउक भाव विचारि कैं, लेहु स्वाद निश भोर।।८

*।।इति रस मंजरी।।*

| |
|---|
| इति श्रीमत रस मंजरी, भई संपूरन आइ।<br>अथ श्रीरसिक सुमंजरी, तीजो लिखौं वनाइ।। |

## अथ श्रीरसिक मंजरी

प्रथमहिं श्रीहरिव्यास भजि, जो चाहत विश्रांम।
तीन लोक चौदह भुवन, प्रगट जु तिनकों नांम।।१
रसिक शिरोमनि सांवरो, गोरी अद्भुत रूप।
विहरत वृंदाविपिन में, विविध विहार अनूप।।२
नित नव दूलह–दुलहिनी, सुंदर सहज सुदेश।
वदन जोति पर वारिये, कोटि कोटि राकेश।।३
लाडलडीले लाल दोउ, रस रगमगे अपार।
मगन महा रस–सिन्धु मैं, तन–मन रहि न संभार।।४
सदानंद रस रूपिनी, राजत नवल निकुंज।
रैंन दिनां पोखत रहै, परम प्रेम के पुंज।।५

घटा सांवरी रूप की, छटा छवीली देह।
नव जोवन तन विपिन मैं, वरसावत रस मेह।।६
अलबेले रंगनि ररे, अंगनि भरि अनुराग।
घूटत अधरसुधारसहि, लूटत सेज सुहाग।।७
मत्त रहत मादिक पियें, अति उमहति अंग अंग।
देखहु यह आसक्तता, छिनहु न छांडत संग।।८
मधुर-मधुर मृदु हसनि मैं, लसनि दशनि रंग भीज।
वए वदन विधु मैं मनहुँ, सौंदामिनि के वीज।।९
लाज भरे महा लालची, लोचन सनै सनेह।
मनमोंहन के मनहुं के, मनु मोहन हैं एह।।१०
प्रीतम कै धन प्यारि ए, प्यारी कै धन पीय।
और कछु न रुचैं इन्हैं, इहि विधि ज्यावत जीय।।११
रसिक मंजरी जो कोऊ, सुनैं गुनैं करि हेत।
रूप रसिक दंपति वसैं, जिनकैं हियें निकेत।।१२

*।।इति श्रीरसिक मंजरी।।*

| |
|---|
| इति श्रीरसिक जु मंजरी, पूरन भइ जू आइ।<br>अथ श्रीमत रग मंजरी, चौथी लिखूं वनाइ।। |

# अथ श्रीरंग मंजरी

वंदौं श्रीहरिव्यास के, चरन युगल जलजात।
मन वच क्रम जानैं जु सो, रंगमहल की बात।।१
रंग रंगीले महल में, रंग रंगीली सेज।
रंग रंगीले रंग में, रंग रंगीली हेज।।२
अति सुकुमार उदार अति, सुंदर सहज सुभाइ।
जीवत ज्यावत हैं दोऊ, अधर सुधारस प्याइ।।३
रंग रंगीली सहचरी, श्रीहरिप्रिया प्रवीन।
खेल खिलावत प्यार सौं, अंग अंग रंग भीन।।४
तनुसख सारी सहज की, रंगी प्रेम के रंग।
ताहि औढि पौढी प्रिया, लै प्रीतम कौं संग।।५
तन तन सों रहे उरझि दोऊ, मन मन सों उरझाइ।
वैंननि बैंन मिलाइ कैं, नैंननि नैंन मिलाइ।।६
कोविद कोक कलानि मैं, काम केलि कमनीय।
हाव भाव रस रीति सों, रमत रसिक रमनीय।।७
रंग विभावरी आज की, वरसन रंग अनंग।
भागवंत भीजत दोऊ, भरि भरि उरसि उमंग।।८
देखहु री देखहु इनहिं, कौंन चढ़ी चित चोज।
हारि न मानैं नैंकहूँ, माते मदन मनोज।।६
रंग मंजरी के फवैं, रंग रंगीले फूल।
मन मधुकर रस लेति हैं, रूप रसिक अनूकूल।।१०

*।।इति श्रीरंग मंजरी।।*

इति श्रीरंग सुमंजरी, भरी परा रस रास।
पूरणता अथ खिलत हौं, मंजरि प्रेम प्रकाश।।

## अथ श्रीप्रेम मंजरी

प्रथमहिं श्रीहरिव्यास के, चरन धारि मन मांहि।
पति दुल्लभ प्रीतम प्रिया, सो सुल्लभ है जांहि।।१
सकल लोक चूडामनी, जद्यपि लाल प्रवीन।
तदपि प्यारी प्रेम कै, आगें है रहैं दीन।।२
देखहु अद्भुत प्रेम की, यह गति कहौ लखीन।
सब जग जिहिं आधीन है, सो याकै आधीन।।३
कोरि जतन कीजै तऊ, वनत न कछू विचार।
जे सुरझे किहिं भांति हठि, ते उरझे इहिं जार।।४
मोहन के मन मधुप है, पर्‌यौ आनि इंहि फंद।
प्यारी पद अरविन्द कौ, चाखि चाखि मकरन्द।।५
शिव रमादि ब्रह्मादि के, ध्यांनहिं मन ठहराइ।
सो प्यारी के प्रेम वस, सदा पलोटत पाइ।।६
जिन पायौ है प्रेम रस, तिनकी औरहि भांति।
देह गेह की सुधि नहीं, नेहैं हाथ विकांति।।७
वृंदावन में प्रेम को, राज सदा भरपूर।
नेम आदि प्रतिकूलकनि, करि डारे तहां चूर।।८
कहनी करनी करन कौ, नाहिंन यामैं कांम।
कृपा करै हरिप्रिया जू, तब पावै यह धांम।।९
प्रेम मंजरी यह कही, परम प्रेम की दैंन।
सुनों सुनावो रसिक जन, ज्यों पावो सुख चैंन।।१०
क्यों हों लहैं न अन्यथा, परम प्रेम को धांम।
रूपरसिक हरिव्यास भजि, जो चाहै यह ठाम।।११

*।।इति श्रीप्रेम मंजरी।।*

## अथ भावना विलास

जै जै जै श्रीहरिप्रिये, इच्छा–शक्ति–सरूप।
खेल खिलारनि महल की, अधिकारिनी अनूप।।१
अलक–लडीली लाडिली, अलक–लडीले लाल।
चाव हाव भावहि भरे, परे प्रेम कैं जाल।।२
सोहै सुंदर सेज पर।
रसिक रंगीले रसिक वर।।३
नेह वेलि उर में वढी, सुरत रंग रस भोइ।
लपटी श्याम तमाल तरु, फूल डहडहे होइ।।४
आलिंगन चुंवन अनुरागे।
रति विपरीति केलि मैं पागे।।५
सहज सनेही एक रस, मोहन मिथुन किशोर।
रति विहार मैं मगन मन, नहिं जांनत निशि भोर।।६
अधरामृत पीवत अनुरागी।
धन्य भाग मांनत वडभागी।।७
कोक कला कुल मैं कुशल, नागर निपट प्रवीन।
प्रिय सुख आस्वादन करत, रति रस आश्रय लीन।।८
श्यामा सन गोरी सुकुंवारि।
विहरत विशद विहार उदारि।।९
प्रेमलता पिय रूप धरि, प्यारी तरु सिंगार।
सुभग वाग अनुराग मैं, विहरत विशद विहार।।१०
अति आनंद भरे अलवेले।
रसिक रसीले रस मैं रेले।।११

मुक्ता लरनि मिली भली, कच अवली छवि देत।
स्वच्छ सौंधे मैं शिलशिली, रंग रली पिय हेत।।१२
अंग अंग छलकत छवि नई।
तन मन मिलि गति एकहिं भई।।१३
सुख विलास रति भौंन के, अगनित अति रस दैंन।
मन मनोज के चोज सों, रमत रुचिर दिन रैंन।।१४
सो सुख कहिवे आवतु नांही।
रह्यो राजि नैंननि हिय मांही।।१५।
जै जै जै श्रीहरिप्रिये, इच्छा शक्तिहि धारि।
रची रीति विपरीति तैं, केलि कला विस्तारि।।१६
अति चंचल गति चलत विहारी।
सुघट सुरत उघटत सुकुंवारी।।१७
किलकि किलकि कोमल कुंवरि, कुंवर कंठ लपटाति।
ससकि ससकि सुंदरमुखी, फिरि फिरि छुटि छुटि जाति।।१८
रमत रमावति अति मन भावति।
ललित लंक ज्यौं ज्यौं छवि पावति।।१६
उमडि उमडि अनुराग बस, बरसत रस घनश्याम।
पोषत प्रेमानन्द भरि, तरुनीतन अभिराम।।१६
सकल लोक चूडामनि जोरी।
श्रीकृष्ण श्याम घन राधा गोरी।।२१
उलह्यो अंकुर प्रेम को, वढ्यो नेंम तरु पेल।
नेह फूलि अनुराग फलि, रह्यो सकल सुख झेल।।२२

छवि की लता चढी जगमगी।
राजीरूप भरी रगमगी।।२३
रस निधानि श्रीलाडिली, रसनिधि रसिक सुजान।
रसिक रसीले खेल मैं, देत लेत रस दांन।।२४
महा लालची दोऊ प्यारे।
चहत न भए एक छिन न्यारे।।२५
दोउ दोउन के प्रान धन, दोऊ दोऊन कैं जीय
दोउ दोउन कैं प्रेयसी, दोउ दोउन कैं पीय।।२६
ऐसी टेव परी है कोई।
सदा संग तउ तृपति न होई।।२७
कहा कहौं कहत न बनैं, इनिक जो कछु प्रेंम।
अनुदिन निकट निहारियै, पैं निजरि न आवैं नेंम।।२८
याही विधि निवहौं सदा, अविचल इनिकौ राज।
निरखि निरखि जीवैं जिनहिं, सब सहचरी समाज।।२६
सुनैं गुनैं चित चावसौं, यह भावना विलास।
रूपरसिक ताकैं हियें, प्रगटै प्रेम प्रकाश।।३०

*।।इति भावना विलास।।*

## अथ नित्य विलास

नित्य सनातन आदि गुरु, नित्य अखण्ड प्रताप।
जै जै श्रीहरिव्यास जू, नित्य हरिप्रिया आप।।१
तिनकी कृपा मनाइकैं, वरनौं नित्य विलास।
रसिकनि जीवनि प्रान धन, युगल केलि रस रास।।२

श्रीराधे नित्य विलासिनी, हित हुलासिनी हीय।
नागरि नेह निवासिनी, प्रेम प्रकाशिनि पीय।।३
तुमहीं जीवनि प्रान मम, तुमहीं जान सुजान।
अहो विहारिनि लाडिली, मेरैं गति नहि आन।।४
कहा कहों लगनि की, लगी दृगनि की डोर।
चितवत मुख रुख तुव लियें, जैसें चंद चकोर।।५
एक आस विसवास गहि, लहि निवास अनुकूल।
सूरज सनमुख ही रहै, जैसे सूरज फूल।।६
कृपा तिहारी तैं लहीं, रसिकविहारी छाप।
सोई चांहनि चाहिये, रूप रंगीली आप।।७
सुनि करुनामय वचन प्रिया, प्रीतम हियहिं लगाइ।
लयो दयो निज मधुर मधु, सुंदरि सहज सुभाइ।।८
सुरति सरद सरवरि सुखद, विधुवर विशद विहार।
विलसत विवि नागर नवल, पूरन प्रनय अपार।।९
अंग अंग मिलि रंग मिलि, रच्यो रुचिर रस रास।
अद्भुत मंडल पर दोऊ, नृत्तत नृत्य हुलास।।१०
कोक कलावलि मंडली, मध्य मनोहर जोर।
मृदुल मृदंग नितंव धुनि, कटि किंकनि कल घोर।।११
उरप तिरप अति गति सुगति, लह लहानि लहकांनि।
लाग दाट कटि मुरनि मैं, थेई थेई मुख वांनि।।१२
विच विच सी वंशी लसी, व्रजवतिसी सुकुंवारि।
सुनि सुनि धुनि पिय हिय हरखि, निरखि निरखि वलिहारि।।१३
इंहि विधि विलास नित, विलसनि प्यारी पीय।
वसहु सदा विवि कुंवर वर, रूप रसिक कैं हीय।।१४

*।।इति श्रीनित्य विलास।।*

## अथ रति विलास

बंदौ श्रीहरिव्यास जू, रसनिधि रसिकनि भूप।
तिन पद कमलहिं बल रचौं, रति विलास सुख रूप।।१
मेरै सरवस धन तुमहिं, प्रान-वल्लभा वाल।
तुमहीं रति मति गति तुमहिं, तुमहीं पति प्रतिपाल।।२
करुनानिधे कृशोदरी, कलवैंनी कमनीय।
वाधा-हरनी हीय की, श्रीराधा रवनीय।।३
रहत सदा अभिलाख उर, सेवों चरन सरोज।
सुनि भामिनि मृदु भुजनि भरि, लीनैं लाइ उरोज।।४
अधरामृत प्यायो प्रिया, रति विलसायो रंग।
हिय हुलसायो सेज मैं, सुख पायो अंग अंग।।५
सहज बडाई सेज की, कैसैं कै कहि जाति।
रसिक शिरोमनि लाल दोउ, जंह विहरत दिनराति।।६
रति रंगराते रगमगे, नगवगे नवल किशोर।
सगवगे सरस सनेह मैं, जगमग जोवन जोर।।७
रति विलासिनि गाइयें, मन मोहन जाको नाम।
रंग रंगीले रवन को, रंग रंगीलो धाम।।८
सुख संपति जामैं सदा, प्रीति रीति परि पूरि।
सुरति सौंज सजियैं रहै, श्याम सजीवनि मूरि।।६
यही अहार विहार निति, यही इन्हैं विसराम।
रूपरसिक इनिकौं यही, यही इन्हैं विसि काम।।१०

*।।इति श्रीरति विलास।।*

# अथ फूल विलास

जटिला मुग्धादि श्री, रंगदेवी नववास।
हितू हरिप्रिया सुमरि कैं, वरनौं फूल विलास।।१
फूले फूले नवल दोउ, फूलनि कुंज उमाहि।
फूली फूली सखिन की, रही फूलि चखि चाहि।।२
सदा खिलारनि खेल की, श्रीहरिप्रिया सहेलि।
लाडिली लाड–गहेलिडी, अलकलडी अलवेलि।।३
एक अनेक प्रकारि है, सेवत सुरत विहार।
सहचरि इच्छा शक्ति को, अचिरज यही अपार।।४
कलित केलि की वेलि वर, रही सहज सुख फूलि।
आल वाल उर दोउन कैं, डहडहाति झुकि झूलि।।५
मोहन मंदिर मोहनी, मोहन को निज धाम।
सुखद सोंहनी सेज पर, विलसावत वर वाम।।६
कहा कहौं तिहि समैं को, सुख आनंद रसाल।
पहिरावति प्यारी जवहिं, पियहि पदंवुज माल।।७
अति सुंदर सुकुंवारि अति, अति सुढारि अवदाति।
लहलहाति लावनि भरी, महमहाति महकाति।।८
किंधौं हिंडोरैं फूल कैं, झूलत मिथुन किशोर।
है है मुदित मचावहीं, दै दै प्रान अकोर।।९
उघटनि आह मलार मुख, नाना तान तरंग।
ससहर सुरसां मिलिति गति, गावति उमंग उमंग।।१०

वरसत घन आनंद रस, सरसत सुभग सुदेश।
हरित भरित है फूलि फरि, वितरित विभव विशेश।।११
धन्य धनी जाकै सुधन, लहि सुधनी धन धन्य।
रूपरसिक जन धन्य जे, निरखत होइ अनन्य।।१२

*।।इति श्रीफूल विलास।।*

रूपरसिक महाराज कृत, श्रीमत् पंच विलास।
सुमिरि हिये धरि हरिप्रिया, लिखे राधिकादास।।१

रूपरसिक रसिकन के भूपा। तिन कृत माधुरि पांच अनूपा।।
सुनत गुनत हिय हरनी वरनी। सुख करनी रंग महलनि सरनी।।३

माधुरि अर्थ कहत कवि लोई। सुनत गुनत हिय तृपति न होई।।
यहै माधुरी अर्थ सु जांनो। मन वच क्रम करिकैं परिमानों।।४

परम मंत्र रूपा यह माधुरि। पंचपदीवत् अर्थ अगाधुरि।।
श्रीमुख रसिकराइ जू गाई। पराभक्ति दाई मन भाई।।५

प्यारी प्रीतम हरिप्रिया, चरन वंदि सुख रास।
लिखै जु पांचौं माधुरी, महा राधिका दास।।६

अरिल्ल—तत्र प्रथम नामावलि माधुरि लिख्यते।
तामैं युगल नाम सुमिरन विधि सिष्यते।।
साधु सजातिन सौं यह माधुरि भाखिये।
हरि हां साधो आनं उपासि सौं अतिगुप्त जु राखिये।।७

## अथ नाम माधुरी

बंदौ श्रीहरिव्यास जू, निखिल लोक गुरु ईश।
तास कृपा ते प्रसन्न है, दम्पति विसवावीश।।१

जै श्रीवृंदाविपिन विलासी।
परम धांम दैदिपन विलासी।।
सब सुखरासी सहज विलासी।
प्रेम प्रकाशी सदा विलासी।।२

प्रभा अपारा परम उदारा।
अति सुकुमारा परम उदारा।।
प्रान अधारा परम उदारा।
गुन आगारा परम उदारा।।३

गुन गरवीले छैल छवीले।
रंग रंगीले छैल छवीले।।
रसिक रसीले छैल छवीले।
अलक लडीले छैल छवीले।।४

वारिज वदने अति अलवेले।
सुखमा सदने अति अलवेले।।
विशद विरदने अति अलवेले।
मोहन मदने अति अलवेले।।५

मोहन लाला अति रस रेले।
रूप रसाला रति रस रेले।।
नैंन विशाला रति रस रेले।
परम कृपाला रति रस रेले।।६

प्रीतम प्यारे प्रान पियारे।
जीय जियारे प्रान पियारे।।
जन सुख सारे प्रान पियारे।
जग उजियारे प्रान पियारे।।७

सहज सांवरी गोरी जोरी।
सुरति समुद्र झकोरी जोरी।।
कंद्रप कोटि कलावलि जोरी।
पूरनचंद्र प्रभावलि जोरी।।८

श्रीश्यामा मृगनैंनी राधा।
कमलनैंन सुख दैंनी राधा।।
प्रान प्रिया पिकवैंनी राधा।
चतुर लाल चित चैंनी राधा।।९

सुंदर श्याम सलोंनों मोंहन।
महा मनोहर टोंनों मोंहन।।
अद्‌भुत अनंग लजोंनों मोंहन।
अंग अंग सुभग सुठोंनों मोंहन।।१०

मोहन मन मृग डोरी सुंदरि।
लोचन चारु चकोरी सुंदरि।।
सदा रंग रस वोरी सुंदरि।
नागरि नित्य किशोरी सुंदरि।।११

मर्कत मनि घनश्याम शिरोमनि।
अति अद्‌भुत अभिराम शिरोमनि।।
नित्य विहारी नाम शिरोमनि।
नागर वर गुन धाम शिरोमनि।।१२

हरिवल्लभा हरि-भामिनी हरिप्रिया।
हरि अनमोदा कामिनी हरिप्रिया।।
हरि रस रूपा नामिनि हरिप्रिया।
हरि आनंद सुधामिनि हरिप्रिया।।१३

प्रिया पद पंकज मन मधुकर पिय।
प्रिया मधुरामृत स्वादि सुघर पिय।।
प्रिया वारिज नीरज नीकर पिय।
प्रिया सुख सरवर के जलचर पिय।।१४

प्रीतम प्रान पोष कर प्यारी।
प्रीतम दुख विदोष कर प्यारी।।
प्रीतम मदन मोख कर प्यारी।
प्रीतम सुख संतोष कर प्यारी।।१५

प्यारो नवल त्रिभंगी नागर।
प्यारो नव नव रंगी नागर।।
प्यारो उरसि उमंगी नागर।
प्यारो प्रिया उछंगी नागर।।१६

प्यारी प्यारे नित्त सुहाए।
प्यारी प्यारे चित्त सुहाए।।
प्यारी प्यारे वित्त सुहाए।
प्यारी प्यारे मित्त सुहाए।।१७

यह नामावलि माधुरी, पहिरैं अति छबि देत।
रूपरसिक रचि पचि रची, रसिक अन्यन हेत।।१८

*।।इति श्रीनामावलि माधुरी।।*

इति नामावलि माधुरी, भई समापत आइ।
अथ माधुर्य सुमाधुर, लिखिते चित्त लगाइ।।

## अथ माधुर्य-माधुरी

श्रीहरिव्यास उदार पद, विन आयें हिय जास।
सो कहि कैसैं कहि सकै, रस माधुर्य प्रकाश।।१
रस माधुर्य प्रकाश की, महामाधुरी मंजु।
सहज सदा लहलह रही, महमहमही मन रंजु।।२
कमोग्रादि ऐश्वर्य कै, रस मैं रहे समाय।
कब निकसै पावै कहां, इन्हैं बहुत अतंराय।।३
आदि पुरुष जासौं कहैं, सकल विश्व को धाम।
नार मध्य कियो अयन जिनि, नारायन है नाम।।४
अंश कला अवतार ए, धरि धरि कारज कीन।
सब इनहीं ते प्रकट ह्वैं, सब इन्हीं मैं लीन।।५
यह लीला ऐश्वर्य की, कोटि कोटि ब्रह्मांड।
करतहं भरतहं हरत हैं, एकै आपु अखंड।।६
सो नारायन धर्म है, धर्मि कृष्ण भगवान्।
स्वयं रूप तहं साखि है, महाभागवत पुरांन।।७
द्वै प्रकार करि करत हैं, प्रगटाप्रगट विहार।
व्रज वृंदावन मैं सदा, नैमिति निति विहार।।८
कलियुगादि क्रीडा करैं, अरु द्वापर कैं अंत।
यह लीला नैमित्ति व्रज, गावत हैं सब संत।।९
लीला नित्यविहार की, श्रीवृंदावन मांहि।
श्रीहरिप्रियाजू की कृपा, विना लहैं कोउ नांहि।।१०
षट ऋतु आदिक जे सवै, निज निज समैं निवास।
लीला ही करि घटि वढै, नहीं काल करि नास।।११

मान विरह भ्रम को जहां,नैंक नहीं लवलेश।
रसिक रसीले रवन को, रसिक रसीलो देश।।१२
यहां राज माधुर्य को जिहिं सम सुख नहिं कोइ।
कोटि कोटि ऐश्वर्यता, एक बूंद तैं होइ।।१३
अति अपार आश्चर्य्यमय, आदि अनादि स्वतंत्र।
सेवैं सुख सव सहचरीं, निमख न पावहिं अंत्र।।१४
जाकी नैंक कटाक्ष तैं, रह्यौ विश्व सब पोहि।
सो मोहन मुशक्यांनि मैं, लयो मोहिनी मोहि।।१५
देखहु या माधुर्य की, महिमा को नहिं ओर।
जाके रंग रंगे रहें, अंग अंग नवल किशोर।।१६
यद्दपि एकहिं रंग में, रहे रंगीले होइ।
तदपि दिन दिन दिपति हैं, गवर–सांवरे दोइ।।१७
सदा सनातन एक रस, सचिदानंद स्वरूप।
अनंत शक्ति पूरन परैं, युगल विपिन पति भूप।।१८
अलक–लडीली वाल कैं, गुन गरवीलो लाल।
रसिक रसीली सुंदरी, सोहैं रूप रसाल।।१६
रमकि रमकि रस मैं सनी, झमकि झमकि झमकांति।
चमकि चमकि चपलानि सी, दमकि दमकि दमकांति।।२०
दिनहिं उजेरो देह को, जगमगाति जिहिं ठौर।
निज इच्छा विस्तार को, कछू खेल ही और।।२१
कहिवे कों मन करतु हैं, पुनि चुप है रहि जात।
क्यौं सोहैं ऐश्वर्य कें, संग रहसि की बात।।२२
ललित अंग माधुर्य के, कहे भावना मैं जु।
रूपरसिक जन जे कोऊ, समझि लैहु मन तैं जु।।२३

*।।इति माधुर्य माधुरी।।*

## अथ वृन्दावन माधुरी

श्रीहरिव्यास कृपाल को, कृपापात्र जो होइ।
वृंदावन की माधुरी, भल पहिचानैं सोइ।।१
जोजन पंच प्रजंत लों, वृंदावन निज धाम।
जंह विहरत इक रस सदा, जोरी श्यामा–श्याम।।२
नव निकुंज नव माधुरी, नव अनुराग अभंग।
नवल किशोरी नवल पिय, नवल सखी लियें संग।।३
श्रीरंगदेवि सुदेवि पुनि, ललित विशाख विशेष।
चंपलता चित्रा अली, तुंगविद्या इंदुलेख।।४
ए आंठों निज प्रिय सखी, आठ आठ इनि संग।
वरनों तिनके नांम पुनि, सुनि सुख उपजै अंग।।५
कलकंठी अरु शशिकला, कमला वर उनिहारि।
कंदर्पा मधुरैंदिरा, कामलता सुकुवारि।।६
प्रेममंजरी प्रेमदा, रंगी प्रेम गुन गाथ।
भूषन सेवा मैं निपुन, श्रीरंगदेवि कें साथ।।७
कावेरी मंजुकेशिका, केशी कवरा चारु।
कंठी हार मनोहरा, महा हीरा हीरा हारु।।८
सखी सुदेवी संग ए, सौंज सुगंध संवारि।
सेवै श्यामा श्याम कौं, कच कवरी रुचि कारि।।९
रत्नप्रभा अरु रतिकला, सखी सुभद्रा नांम।
भद्ररेखिका सुंदरी, सुंदरिमुखी सुवांम।।१०
हंसि कलापिनि चतुरि अति, ए ललिता के पास।
सावधान निशिदिन रहैं, लिये सौंज मुख वास।।११
माधवी मालति कुंजरी, चातुरि चंद्रारेख।
चपला हिरनी सहचरी, राजत सुंदर वेश।।१२

सुरभी अरु शुभ आंनना, रहत विशाखा संग।
जिहिं छिन रुचि है दुहुंनि की, सजवति वस्त्र सुरंग।।१३
मृग लोचनि मनि कुंडला, शुभ चरिता अति रूप।
चंद्रा अरु चंद्रलत्तिका, मंडलि परम अनूप।।१४
कंदुक नैंनि सुमंदिरा, सब रस जाननि हारि।
चंपलता कैं संग ए, विंजन रचत संवारि।।१५
तिलकिनि सखी ररालिका, वेनी वर छवि जाल।
सौर सुगंधिक कामिला, कांमनागरी वाल।।१६
नागर–वेलि सुशोभना, ए चित्रा कैं साथ।
पान करावै प्रीति सों, परम सुगंधिक पाथ।।१७
मंजु–मेधारु सुमेधिका, तन मेधा सुख दैंनि।
गुन–चूडारु वरांगदा, मधुस्यंदा सुख ऐंनि।।१८
मधुरा अरु मधुरेक्षणा, रहत सदा रस लीनि।
तुंगविद्या कैं संग रहैं, विद्या गानं प्रवीनि।।१६
तुंगभद्रा अरु रस तुंगा, रंग वाटी गुन धाम।
चित्रेखारु सुसंगता, चित्रांगी अभिराम।।२०
मोदिनि अरु मदनालसा, सोहत रूप निधान।
इंदुलेखा कैं संग रहैं, सेवा कोक बखान।।२१
जिहिं छिन रुचि ह्वै दुहुन की, तिहिं छिन पूरति ताहि।
अति हित सौं सेवा करैं, रहैं युगल चित चाहि।।२२
जो जो जाकी सोंज लैं, ठाढी रहै सब काल।
याही तैं नित जगमगैं, वृंदाविपिन रसाल।।२३
श्रीवृंदावन महातम, समझि लेहु मन मित्त।
मंगलरूपी जानिकैं, श्रीपति वंदत नित्त।।२४

ऐसो वृंदाविपिन है, सर्वस रस को सार।
श्रीराधावर लाल को, निति नव नित्य विहार।।२५

श्रीवृंदावन माधुरी, कैसैं कै कहि जात।
शेष सहस मुख कहि थके, अजहूँ पार न पात।।२६

उपमा वृंदाविपिन की, देवे कों नहिं ओक।
जाकी सुखमा लेश तैं, सर्वोपर गोलोक।।२७

कोटि कोटि वैकुंठ की, प्रभुताई धों कौंन।
ऐसो वृंदाविपिन है, रसिकन कौ रस भौंन।।२८

आदि अंत जाको नहीं, माया कों न प्रवेश।
प्रगट विराजत अवनि पर, वृंदाविपिन सुदेश।।२९

वृंदाविपिन प्रभाव कौं, जानैं जोइ प्रवीन।
चमदिष्टी देखत नहीं, सो माया आधीन।।३०

वृंदावन यश सुनन की, जाकैं रुचि नहिं होइ।
ताकौं तजिये तुरत हीं, वा सम दुरित न कोइ।।३१

वृंदावन को नाम सुनि, जिनकें हियैं हुलास।
सवतैं उत्तम जानि जिहिं, रहियें तिनकें पास।।३२

ब्रह्मादिक वंछित रहै, वृंदावन रज आंहि।
सो आवतनहिं नैंकहूँ, ध्यान मात्र उर मांहि।।३३

रसनिधि वृंदाविपिन हैं, रसिकनि को आधार।
रसिक रसीली लाडिली, विहरत वर सुकुंवार।।३४

सदा सनातन एक रस, वृंदावन निज गेह।
राजत राधारवन जंह, एक प्रान द्वै देह।।३५

जिनकें नैंननि जगमगें, गवर सांवरे दोइ।
महिमा वृंदाविपनि की, जानत हैं भल सोइ।।३६

वृंदावन रस रसिक विनु, अनत न कहूँ विचार।
जिनकौं और रुचै नहीं, तिनकैं यही अहार।।३७
जो कोउ वृंदाविपिन को, नाम कहें इक वारि।
तन मन धन ता ऊपरैं, दीजै सर्वस वारि।।३८
कुंज–कुंज प्रति कुंज प्रति, कुंजविहारी केलि।
कुंवरि लडैती संग लियें, सर्वसु रस की बेलि।।३९
वृंदावन अनुराग कौ, फूल्यो कमल सुरंग।
निशदिन भ्रमत रहै जहां, रसिकन के मन भृंग।।४०
वृंदाविपिन सुहावनों, सुख को सहज निवास।
कृपा करै श्रीस्वामिनी, तब भलें पावैं वास।।४१
सोउ कृपा चाहत लह्यो, तौ यह जतन विचारि।
श्री हरिप्रिया पद पद्म कौं, लै अपनैं उरधारि।।४२
जवहि कुंवरि करिकैं कृपा, दै वृंदावन वास।
दंपति चरन सरोज कैं, अनुदिन राखैं पास।।४३
तातैं श्री हरिप्रिया की, शरनि गहौ करि प्रीति।
युगल किशोर विहार की, ज्यौं जानैं रसरीति।।४४
कोटि कोटि जनमांन्त लगि, पंचा – अगनि तपात।
तौहू नाहिंन पाइवौ, ऐसी उत्तम बात।।४५
जो कदाचित न नां वसैं, तौ निज मनहिं वसाय।
यामैं नाहिंन झूठ कछु, कहत महत कविराय।।४६
जो महा अगम तैं अगम अति, निगम न जानैं जाहि।
सो तैं पाई सुगम हीं, काहि न सुमिरै ताहि।।४७
मन चितवत वहु विधि विषै, सरै न एकउ काज।
वृंदावन आनंद घन, सुमिरें ही सुख साज।।४८

तजि कैं वृंदाविपिन कौं, अनतहि चित कहुं जाइ।
ते या भव सागर महैं, परि हैं गोता खाइ।।४६

तात मात सुत भ्रात भृति, सजन सनेही जोइ।
ए जिनिं जानैं आपनैं, स्वारथ के सब कोइ।।५०

स्वारथ हू साध्यो चहैं, तौ इहिं विधि करि जानि।
जैसैं भूषन गंध तैं, नाहिं सती की मानि।।५१

इनि मैं जो तू चित धरै, बिसरै जीवनि मूरि।
तौ तौ तेरे वदन मैं, क्यों न परैगी धूरि।।५२

वृंदावन शोभा निरखि, जलभरि नैंन नेहन।
तिन नैंननि में डारिऐं, भरिभरि मूठी रेन।।५३

वृंदावन के द्रुम लता, सदा सनातन जाति।
युगल चंद आनंद उर, दिपति रहैं दिन राति।।५४

फन परि नांहिंन रवि तरे, नहिं विराट कैं मांहि।
सब तैं न्यारो है जदपि, जगमगात जग आंहि।।५५

कोटि कोटि सुकदेव से, कोटि कोटि जयदेव।
निति नव गुन वरनन करैं, तउ नहिं पावहिं भेव।।५६

वृंदावन घन कुंज की, शोभा कहि नहिं जाइ।
रसिक लाडिली लाल दोउ, तामैं रहैं लुभाइ।।५७

वृंदावन तजिए नहीं, कहौ कोरि जो कोइ।
ऐसी मनमैं राखियैं, निज अधिकारी होइ।।५८

जो तेरो मन चपल है, तो इहिं विधि समझाइ।
चपल नैंन चित चोर कै, तिन सों चित्त लगाइ।।५६

वृंदावन को चिंतवन, हित करि करैं जु कोइ।
सो रस पावै सुलभ हीं, जो जग दुल्लभ होइ।।६०

जिन भूलैं मूरख महा, फूल्यो लखि संसार।
झूलै चौरासी महीं बूडै काली धार।।६१
श्री राधा वर लाल विन, तेरो कोऊ नाहिं।
यह बातैं जिय समझि कैं, वसि वृंदावन मांहिं।।६२
वृंदावन के वसन मैं, वडो लाभ तौ एह।
श्री यमुना जल पीयवौ, तन उडि लागैं चेह।।६३
नित मुद मंगल जो चहैं, तौ सुनि लै यह बात।
चिदघन वृंदाविपिन मैं, रहो प्रेम उमदात।।६४
जिनकैं नैंननि जगमगैं, वृंदावन को ध्यान।
कहि धों कैसैं रहि सकैं, तिन उर तिमिर अज्ञान।।६५
वृंदावन के यश विना, श्रवन सुनैं रस आन।
तिनकौं जानौं जगत मैं, पामर पशू समान।।६६
कहा भयो नर तन लह्यो, दह्यो न मन हंकार।
रह्यो न वृंदाविपिन मैं, कह्यो न युगल पुकार।।६७
वृंदावन विन अनत रस, उचरत कोउ रसाल।
चुरकट ह्वै लागत महा, कुरकट शब्द रसाल।।६८
चित की वृत्ति राखै यहै, तौ तेरी वलि जाउं।
जागत सोवत सुपन मैं, वृंदावन कौ नाउं।।६९
वृंदावन वन अधिप की, शोभा को नहिं ओर।
सव दिन जहां संतत रहै, इक छित युगल किशोर।।७०
कह्यौ बहुत समुझाइ कैं, रे मन तौसौं झूझि।
वृंदावन सों करत हित, वांह्मन कौं जिनि वूझि।।७१
कोटिक तीरथ न्हाइए, कोटिक करौ उपाव।
पैवौ नाहिन विपिन सुख, विना सहचरी भाव।।७२

वृंदावन मैं रहन की, ऐसि रहैं मन मांहि।
टूक टूक ह्वै जाय तन, तउ वन तजिए नांहि।।७३
यह मन मैं विसवास गहि, गरजत रहै निशंक।
प्रेम विवश जांनैं नहीं, कहा राव कहा रंक।।७४
अनन्नि उपासिक रसिक मनि, निज मन मैं जोइ जानि।
अहोनिशा उचरत रहैं, श्रीवृन्दावन बानि।।७५
रसिक विहारिनि रसिक वर, जिहिं रस रसन रसांहिं।
जवहिं कहावैं रसिक जन, रसिक मंडली मांहिं।।७६
रोम रोम प्रति रसन लख, श्रवन नेत्र पुनि होइ।
कथन सुनन अरु छवि लखन, तृपति होत नहिं कोइ।।७७
शशि–शेखर सावित्रि–वर, सुरवर गनवर शेष।
दिन छिनदा छवि कहें तउ, नैंसुक लहें न लेश।।७८
ऐसेहू कह सकत नहिं, हों अनुगति मति मंद।
कैसें पकस्यो आइहैं, वोंना–कर नभ चंद।।७९
चारि वेद षट शासतर, अष्टादश जु पुरान।
सकल सार को सार हैं, वृंदावन को ध्यान।।८०
सीखै सुनैंरु गाइ हैं, छांडि सकल विपरीति।
रूपरसिक तिनकैं हियें, बढै युगल पद प्रीति।।८१
पंदरासैरु सत्यासिया, मासोत्तम आसोज।
यह प्रबंध पूरन भयो, शुकला सुभदिन द्योज।।८२

*।। इति श्रीवृन्दावन माधुरी।।*

इति वृंदावन माधुरी, रसिकन जीवन प्रांन।
पूरणता पाई यहैं, दोइ असी दोहांन।।१३
अथ सिंद्धांत जु माधुरी, करों लिखन सुखदाइ।
श्रीहरिप्रियां कृपा विना, समझी नांहि जु जाइ।।१

## अथ सिद्धांत माधुरी

।। छप्पय।।

जय जय श्रीहरिप्रिया देवि दंपति की दासी।
इच्छाशक्ति स्वरूप महल की टहल उपासी।
रहै प्रसन्न मुख कियें, लियें रुख हियें हुलासी।
दुरि देखत सखि जहां तहां की करत खवासी।
अति कृपाल करुणारणव, श्रीहरिव्यास उदार।
देवी जीउ उधार हित लीन्ह मनुज अवतार।।१

यहां कोउ प्रसन करै कि सखि दूरि देखैं अरु श्री हरिप्रिया जू तहां की खवासी करतु हैं, तौ यहूतौ एक सखी हैं, इनिकौ निरंतर सुख की प्राप्ति कैसें संभवै ? तौ तहां कहिए कि श्रीहरिप्रिया जू है सु युगल जू की इच्छा शक्ति निजदासी स्वरूप धारन कीनौं है, इनि विन विहार वनतु नाहिं, काहे तैं ? जो इच्छा होइ तो बिहार होइ। यातैं इनिको स्वरूप मुख्य जांनियें। और सखी जो हैं सो श्री रंगदेव्यादिक प्राधान्य यूथेश्वरी हैं, पै एहु सब श्री निज दासी जू कौ स्वरूप हैं। आप ही अष्टधा विग्रह धार्यो है यातैं इनि मैं उन मैं भेद नांहीं। जैसैं श्रीप्रियाजू, प्रीतम, प्रीतम श्रीप्रियाजू, या प्रकार जांनिये, अन्यथा नांहिं। और कोउ कहै–अष्ट सखिन मैं मुख्य श्री ललिता जू सुनियतु हैं, अरु तुमनैं श्रीरंगदेवी जू मुख्य कही, तौ तहां कहिए कि अपनैं इष्ट मांही गुरुत्व शक्त्योपदेश कारिणी कृपा इनि ही कौं है, यातै मुख्य कही अन्योऽन्य परसपर स्नेहपूर्वक अतिप्रसंन युगल जू कौं, सेवित हैं। तत्त्व एक ही है, सेवा निमित्त अनेक रूप आभासतु है, भेद न करनौं, ए प्यारी–प्यारे जू की प्यारी सखी हैं।

जब दोउ प्रीतम परम प्रकाश मय मोहन–मन्दिर मैं अलवेले अति सनेह सौं सुरत युद्ध करत हैं तब वा समैं ए न्यारी ह्वै अति सुख अमृत पान करिवे

के लियें नीरिक्षण करतु हैं अरु श्रीहरिप्रिया जू भ्यंतरि यातैं रहति हैं कि वहां सुरत युद्ध है, जो दोउन मैं कोउ एक विवश होइ तौ संभराइवेकौं चाहिएं, अरु वे जो श्रीरंगदेव्यादिक सखी हैं सु उनि परम रमनीय परम अद्‌भुत लाल पीत श्याम सेत मनिन करि जटित मुकतानि की जालिन के रंध्रनि – मगलग, वा पूरण प्रेम रंगभरी माधुरी कों अवलोकनि करि परसपर निज भाग सराहति हैं। कहति हैं कि धंन्य भाग हैं, सजनी ? रसिक रसीले जू की रहसि निहारैं दिन रजनी, ताते यह सुख जू है सु इनिके आश्रय विना अति दुल्लभ है। सुल्लभ जाही कौ हैं कि जा पर श्री निजदासी जू निज करि कृपा करैं। यातें प्रथम इनि कौ आश्रय लेइ जब इनिकी कृपा होइ तब सखी स्वरूप कौ प्रापति ह्वै करि श्री मन्निज वृंदावन मैं नित्य विहार कौ सेवन करें, अरु निरंतर रूप माधुरी कौ पान करें। कैसो है श्री मन्निज वृंदावन ! जाकी उपमा लेश कोटि कोट्यंश भाग मैं वैकुंठ भी नांहीं, ताकी उपमा कहत वनतु नांहीं। श्री हरिप्रिया जू कृपा करैं तौ देखत ही जाकी छवि कौं रहिए, तातैं कछु साधक के मन मैं आंवन कों छवि कहतु हैं। जाकी दिव्य कंचनमयी भूमि है, अनेक भांति की मननि करि जटी है, अति विचित्रतासौं वृक्षनि की शोभा, पेड नील मनिमय है तौ शाखा हरित मनिमय हैं, पत्र पीत मनिमय है तौ फल अरुन मनिमय है। फूल अति सुरंग, सपष्ट सौरभ मधुर, बहुत द्रुम ऐसे हैं जिनके फल फूल शाखा मूल सर्वत्र नानारंग आभासत हैं। परम मनोहर रम्य कोटि कोटि सूर्य कोटि कोटि चंद्राग्नि कोटि कोटि कांम सूर्य्यन को प्रकासु है। लता है अति रसीली ते ललित तरुनि सौं लपटाय रही हैं, और बहुतक लता उरध गामिनी हैं, और बहुतक लता भूमिकौं प्रसरित हैं, और श्री यमुनाजू कंकनाकार अति सिंगार रसमय पय करि पूरि वहति हैं। नाना रंग तरंगिनी करि अनेक छवि पुंज छलकति हैं, अरुन नील स्वेत पीत नानारंग कमल कुल जहां तहां प्रफुल्लित हैं, तिन पर मधुर मधुलुब्ध गुंजार करतु हैं। अनेक स्वरनि सौं सारस हंस चक्रवाक कारंड कोकिला कोक कीर चकोर चात्रिक मोर इत्यादिक नाना पक्षि युगल जू के नांम रटतु हैं स्वतंत्र। अरु उभय तट

हैं, सुरत्नवद्ध हैं, तिन पर वृक्षनि की डारैं फल फूलनि कैं भारैं झुकि झुकि जलकौं परसि रही हैं। अति शोभायमान हैं तहां की शोभा देखि दंपति जू आप लोभायमान ह्वै रहे हैं, अरु इक छिन न्यारे नहीं ह्वै सकति हैं, ऐसो जो निजधाम ताकैं मध्य नव नित्य स्थल अनेक दल कमलाकार तिन मैं निज पंकति अष्ट दल हैं, तिन पर अष्ट प्रिय सखीनि की कुंज है तिनके नाम–'रंग, रसद, नव, नवल, सुख, सुखद, मंजु, मंजुल,' इनि विषै समस्त सेवा की साभिगिरी रहति हैं, जिहिं जिहिं समैं जो जो वस्तु की इच्छा होइ तिहिं तिहिं समैं सो सो सव सहज ही श्रवति हैं।

अति कमनीय कर्णिका तेजोमय ताकैं उपर चारि सरोवर हैं "मधुर सरोवर, मांन सरोवर, स्वरूप सरोवर, रूप सरोवर, चारौं ही वोरनि जिनिकी रचना अपार हैं, अनेक नगनि करि घाट निर्मित हैं, सुंदर सीढीन की प्रभा को प्रकाश है। तिन सरोवरनि के मध्य भाग एक अष्ट द्वार कौ महल है द्वार द्वार प्रति तोरन धुजा पताकादि अलंकृत है, विशाल मुक्तानि की वंदनमाला कुंदन कपाट निकुधानि के निकर निकरि जटित जगमगति हैं जोतिजाकी एक छवि लेश पर कोटि कोटि दुति धरन कै प्रकाश कौंन हैं। स्फटिक मनिमय भींति अति स्वच्छ है जामैं श्री मन्निज वृंदावन कौ संपूर्ण प्रतिविंव ठौर ठौर अनेक ह्वै आभासतु हैं। अद्‌भुत अनेक रंग चित्रनि करि चित्रित हैं, चारु चारु चूनी चहुंवोर चमकती हैं। खिरकनि की गोखन झरोंखन की जारीनि की, अटनिअटारीन की दुति दमकति हैं छाजेन की छाजनि विराजनि विविधि विधि साजनि शिखर शोभा झूमि झमकति हैं। खमकति खरी खिली खुमक ताखननि की रमकति राजी रवि छवि छमकति हैं। ता महल कै भ्यंतरि चौकवीचि रत्नमंडल पर कलपवृक्ष नीचैं मोहन मंदिर हैं, सरसमनि, मृदुलमनि, कंचनमनि, सूर्य्यकांति, चन्द्रकांति, हेमकांति, मनिकांति, पद्‌मराग, पुष्पराग इत्यादि दिव्य अद्‌भुत मनिन करि विचित्रता सौं रचित हैं। ताकैं मध्य मृदुल सेज पर श्री श्यामा श्याम जू को सुरत विहार हैं। इहां और काहू को प्रवेश नांहीं विना एक श्री हरिप्रिया जू, क्यौं कै ए इच्छा शक्ति निज दासी स्वरूप

हैं, यातैं और याको जो भेदाभेद को अभिप्राय है सो पहिलै लिख्यो ही है, तैसैं समुझनौ।

मोंहन मंदिर कैं अग्रभाग आंगन मैं मोंहन मंडल ताकैं ऊपरि अनोपम अष्टकोंन को एक सुख सिंहासन तहां युगल जू विराजत हैं। कौंन कौंन ? प्रत्येक एक प्रिय सखी निज निज गननि युल अनेक भावनि सों सेवा करत हैं।

प्रिय सखिन कै नांम : श्रीरंगदेवी जू १ श्रीसुदेवजी जू २ श्रीललिताजू ३ श्रीविशाखा जू ४ श्रीचंपकलता जू ५ श्रीसुचित्रा जू ६ श्रीतुंगविद्या जू ७ श्रीइंदुलेखा जू ८। इनिकौं प्रिय सखी जांनिएं, काहू काहू मतांतर विषैं इनिकै और हू नाम सुनियतु हैं, सो यामैं कछू संदेह न गनिए। जैसैं श्रीप्रियाजू कै अनेक नाम हैं निज महल के जैसैं तैसैं हू सखिन के जांनिएं। ऐ परि यह जु स्वमतानुसार लिखे हैं। निखिल महीमंडलाचार्य प्रवर चक्र चारु चूडामनि श्री निम्बार्क जू को हृदय हैं, सो तो यह विना कृपा अलभ्य हैं परि वाकौ सहज ही उपाव हैं श्री गुरुचरणाश्रय। सो श्री गुरु नांम निर्गुण संप्रदायस्थ आचार्यन को हैं, और कों यह नाम उपमां नहीं, जो अनंत जन्म तमाश्रय होत होत रजाश्रय होइ, रजाश्रय अनंत जन्म होत होत सत्वाश्रय होइ, पश्चाज्जो कृपा होइ तौ निर्गुण संप्रदाय श्री निम्बार्क ताकै आश्रय होइ, तव ही यह सुख मिलै अन्यथा मिलतु नांहीं, श्री आचार्य्य जू अपनैं ग्रंथन मैं लिखि गये हैं। श्री हंसकृष्ण अनिरुद्ध निंवार्क। सनक सनंदन सनत्कुमार सनातन। नारद यती ऋभु, हंस। निंवादित्य रंगदेवि ताप सुदर्शन। श्रीनिवासाचार्य सुदेवी औदुम्वर चित्रा। श्रीहंसादिक चतुर्व्यूहाचार्य सर्वकाल विषैः– सनकादिक सत्ययुग के आचार्य १ श्रीनारदादिक त्रेता युग के आचार्य २ श्रीनिंवादित्य द्वापराचार्य ३ श्री निंवासादिक कलियुग आचार्य ४। ऐसैं इनहीं को नांम श्रीगुरु है। उपदेश करिवी इनहीं कों हैं। और त्रिगुनीन कौं अधिकार गुरुत्व को नहीं, तहां सर्ववेद पुराणगम शास्त्र प्रमाण हैं। श्रीमदभागवतादि और बहुत विस्तार करि लिखन मैं ग्रंथ वढि जाइ तातै श्री स्वधर्माध्वबोधादि ग्रंथन मैं तौ विस्तार करि लिख्यो ही है।

तासौं श्री गुरु निर्गुण संप्रदायस्थ आचार्य ह्वैं सो साक्षादभगवद् रूप हैं। तहां किंचित् प्रमाण लिख्यत हैं–श्रीलघुस्तवे श्लोक:–

**आचार्यो विष्णुरूपोहि पुराणोष्विति निश्चयः।**

**निग्रहानुग्रहाभ्यां वै श्रीकृष्णेन समानता।।**

जिनिको निग्रह अनुग्रह श्रीकृष्ण के समान हैं, परंतु इतनौ अधिक हैं सो भगवान् रूठे तौ श्रीगुरु सहाय करैं "पैं श्रीगुरु रूठे भगवान पैं सहाइ न होइ सकैं, तातैं सर्व भांति करि श्रीगुरु जू कों प्रसन्न राखै। तथाहि

**हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।**

**तस्मात्सर्वप्रयत्नेन प्रसाद्यः सर्वदेहिनाम्।।**

अरु श्रीगुरु विषैं मानुषी, बुद्धि न करै, तथाहि श्लोक:–

**आचार्य्यै मानुषी बुद्धिर्न कर्तव्या कदाचन।**

**अस्माभिः श्रेय इच्छछि्भर्यतः स्थानं हि श्रेयसाम्।।**

अरु श्रीगुरु हैं सो ज्ञान अंजन की शलाका करि अज्ञान तिमिर करि अंध भये हैं तिनकैं नेत्रन के प्रकाशकारी हैं, पुराणान्तरे श्लोक–

**अज्ञानतिमिरांधस्य, ज्ञानांजनशलाकया।**

**चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्री गुरवे नमः।।१**

ऐसे जू निर्गुण संप्रदायस्थ श्रीगुरु हैं, तिनकौं नमस्कार हैं, जिनके चरणाश्रय तें सर्वसु मिलैं अरु कोउ भगवान् की प्रापति चाहै सो श्रीगुरु को आश्रय लेइ, वेदहू कहत हैं कि विनां गुरु भगवान की प्रापति नांही। पंच संस्कार के दाता हैं श्रीगुरु तिन समान प्रत्युपकार करिवे कौं द्वितीयो नास्ति। श्रीलघुस्तवे श्लोक :–

**पंच संस्कारदायी च ममोद्धर्त्ता भवार्णवात्।**

**तेषां प्रत्युपकारार्हो न कोपि जगतीतले।।**

तातै प्रथम जब गुरु को आश्रय मिलै कृपा करि जब श्रीगुरु नवधाभक्ति करि दिढावै, करत करत परिपक्व भयो जानैं तव प्रसंन्न ह्वै हृदगत वस्तु उपदेशें अरु निज रूप की प्रापति करैं, नित्य लीला दरसावै, सो नित्य लीला कमोग्रादिकन कौं अलभ्य हैं। तहां कोऊ कहै कि कमोग्रादि को अर्थ कहा ? तहां अर्थ कहतु है–कमोग्रादि कहतां–क = ब्रह्मा, मा = लक्ष्मी, उग्र = शिव इन आदिकन कौं अलभ्य है तौ तुम कैसैं जांन्यौं ? तौ यह उत्तर कि ब्रह्मादिक हैं सो वैकुंठनाथ के अधिकारी हैं सो वै अपने अधिकार मैं मग्न हैं। उत्पत्ति पालन, हरन, त्रिगुन हीं मैं रत होइ रहे हैं, जिनके जानिवे को यह रस नांहीं। रस मार्ग भिन्न है।

श्रीसनकादि द्वारा ही पाइये भक्ति प्रेम तत्त्व, अधिकार इनिहीं कौं है। यातैं श्रीमुख तैं आप कह्यो हैं :– **"मच्छिष्यैः सनकादिभिः"**। तथा–

**यद्धृत्वा पठनाद्ब्रह्मा, सृष्टिं वितनुते ध्रुवम्।**
**यद्धृत्वा पठनात् याति महालक्ष्मीर्जगत्र्यम्।**
**यद्धृत्वा पठनाच्छंभुर्हर्त्ता ऽऽ सं सर्वतत्त्ववित्।**

सो तत्त्ववित् श्री सनकादिक हैं यातैं जे श्री प्रिया प्रीतम जू के धामाश्रित भये, सो इनिहीं द्वारा भये। और द्वारा नास्ति एव, पृथु, ध्रुव, प्रहलाद, अंवरीष, प्रियव्रत, दक्षपुत्राः, और अनेक मुनिजन, बाल्मीकि वेदव्यासादिक, सनकादिनारदादिकन के ही शिष्यत्व करिकैं युगलधामाश्रित भये, सो यह विचार सर्ववेदागम पुरानन मैं लिख्यो है और श्रीमंत्र राज राजेश्वर श्रीमदष्टादशाक्षर जू की व्याख्या श्रीमुख तैं श्रीआचार्य चक्र चूडामनि जू श्री निंबादित्य रंगदेवी जू करी हैं, तामैं लिख्यो ही है। और जो युगाधिकार शिष्याधिकार, श्री स्वैतिह्यहादर्द–संवेद्य हंसगुह्यादि पंचकन मैं कह्यो ही है सपष्ट करिकैं, तातैं रस मार्ग भिन्न हैं इन त्रिगुनीन तैं। यह तो मुक्तन हू कौं अलभ्य है तौ कर्म ज्ञानीन कौं कहां, याकौ प्रमांन श्री शिवरहस्य मैं है। तातै याकों तौ कृपा चाहिये, कृपा होइ जब प्रेम होइ, तव यह रसु पावै, तहां श्री महावाक्य प्रमान हैं–

कर्म ज्ञान को नैंकहूँ, नांहिं जहां संसर्ग।
प्रेम विना पहुँचै नहीं, पांचौ ही अपवर्ग।।

तातैं प्रेम ही मुख्य हैं, सर्वथा कोउ चाहै कि विनां प्रेम ही प्रापति हैं तौ कदाचित् नाहीं, क्यों कै–अन्य अल्लभा प्रेम सुल्लभा यहै विरद विदतु हैं, सो सनकादिक संप्रदाय कृपा साध्य हैं। क्यों ? प्रेम पराभक्ति की भूमि श्रीसनकादिक हैं। इनिहीं की कृपा करि प्रेम रूपी परा सुख मिलै। सो सुख कैसो है ? आनंदमय द्विधा रूप अलवेलो है और बहुत परिकर प्रिय सखीगण श्रीजटिला, जंजपूका अर्कू, धृताशी, मुग्धा, स्निग्धा, विदग्धा, असंदिग्धादिकन को लिख्यो नांही, काहै तै यह ग्रंथ बढि जायगो, तातैं ग्रंथांतरन तैं जांनिएं। श्रीमहावांनीं मैं लिखन परिकर कौ है, और श्री चक्रतिलक मैं भिन्न-भिन्न स्पष्ट लिखन है जू।

यह सिद्धांत जु माधुरी, कही बुद्धि अनुसार।
रूपरसिक जन जो कहैं, लहैं सोइ सुखसार।।१
निर्गुन कौं कहिए सदा, रूपरसिक यह वात।
त्रिगुनी कौं कहिए कहा, पुस्तक हू न दिखात।।२
त्रिगुनी निंदे आप हरि, श्री गीता मैं वात।
रूपरसिक तातैं भजौ, निर्गुन निर उतपात।।३

*।। इति सिद्धांत माधुरी ।।*

## अथ हरि भक्ति माधुरी

निखिल महीमंडल जु मनि, मंडन प्रवर सुचारु।
प्रणितन प्रणय प्रकास जै, श्री हरिव्यास उदार।।१
श्री हरिव्यास कृपा वलहिं, पाइ बुद्धि अनुसारि।
हरि भक्ति माधुरी भेद के, वरनों अंग उचारि।।२

तीन वार श्रुति सोधि विधि, यह ठहराई ठीक।
जाकरि हरि मैं होइ रति, सोई मारग नीक।।३
जो मारग हरिभक्ति है, सब धर्मनि शिरमौर।
भजनीकनि कौं भव्य कर, या सम नहिं कोउ और।।४
युग युग मैं जगमगि रह्यो, अविचल जाको राज।
ताही को वरनन करों, जासौं मेरें काज।।५
परा प्रेम नवधादि ए, उत्तम मध्यम हीनि।
अब इनिके अंगनि कहौं, सुनहु अनन्य प्रवीनि।।६
श्रवन कीरतन औ स्मरन, पूजन पुनि पद सेव।
वंदन दास्य रु सख्यता, आतम अर्पन एव।।७
ए नवधा कै अंग हैं, अव लछन पहिचांनि।
संतनि मुख सुनिवौ कथा, श्रवन भक्ति सोइ जांनि।।८
हरि गुन गावैं हरखि उर, कीरतन हैं जोइ।
इक छिनु सुरति न भूलहीं, सुमिरन कहिएं सोइ।।९
समैं समैं सेवा सवै, सवै भावना धारि।
मंगल सैंन प्रजंत लौं, पूजन सोइ विचारि।।१०
चरन कमलहिं पलोटही, मन करि चित्त लगाइ।
पद सेवन सोइ भक्ति हैं, पुनि नमिएं शिरनाई।।११
वंदन भक्ति जु यह कही, ताके दोइ प्रकार।
मन करि तन करि कैं करें, वंदन वारंवार।।१२
रहैं सभय कर जोरि कैं, करैं न आज्ञा भंग।
दास्य भक्ति सोइ जानिए, सुनहुं सख्यत्व प्रसंग।।१३
कवहु न विछुरैं संग रहैं, जित तित आपनौं श्याम।
दृढता राखे मित्रता, सख्यभक्ति सोइ नाम।।१४

तन–मन–धन ग्रह ग्रेहिनी, इत्यादिक सब वस्तु।
करैं समर्पन हरि विषै, आतम अर्प्पन ए प्रस्तु।।१५
अब सुनिए जु उदाहरन, इनिके जे अनुरक्त।
परिछत शुक प्रह्लाद पृथु, पद्मा अक्रूर भक्त।।१६
हनुमांन अर्जुन बलि जु, ए नवधा रस पूरि।
इनिकें पथ जे अनुसरैं, तिनके भाग हं भूरि।।१७
हीन भक्ति जो यह कही, अब सुनि मध्यम प्रेम।
जाकें प्रगटें जगत के, छूटि जाइ सब नेम।।१८
उनमत ह्वै जित तित फिरैं, सुधि न रहैं घर वार।
लै उसास रोमांच ह्वै, दृगनि अखंडित धार।।१९
लोक वेद की कांनि जो, कछू न मांनहिं शंक।
भूत प्रेत डर जछ तैं, विचरैं होइ निशंक।।२०
कानन और सूनैं नहिं, आंखिन दृसे न और।
मुखसौं और कहै नहीं, हसि रोवै ज्यों वौर।।२१
कबहू गदगद कंठ करि, शब्दनि होत प्रकाश।
कबहूँ ह्रदै उमंगि कैं, गांवहि भरैं हुलास।।२२
कबहु मौंन गहि कैं रहै, नृत्य करैं हिय फूलि।
इंहि विधि प्रेमाशक्त ह्वै, जाइ सवै सुधि भूलि।।२३
भूष त्रिषा लागै नहीं, मुख पियराई होइ।
स्वासा सीरी नैंन उर, और न भांवहि कोइ।।२४
निशदिन नींद न आवहीं, ए षट लछन जांनि।
जिहिं घट प्रगटैं आइकैं, प्रेम भक्ति सोइ जांनि।।२५
जैसैं ब्रज सुंदरि सवैं, भई प्रेम रस लीनि।
ह्वै तनमयि हरिकौं भजै, भरि भरि नेह नवीनि।।२६

अव उत्तम के भेद हैं, सुनहुं रसिक चितलाइ।
हीन मध्य तैं परैं जो, परा कहत समुझाइ।।२७
नित्य निकट–वरती रहैं, विन विछेप कर जोरि।
सनमुख ऐसैं भृत्य जौं, पलकांतरकों तोरि।।२८
रस पीवैं मिलि सेव्य सौं, सेवक भावहिं धारि।
भिन्न नहीं अरु भिन्न हैं, इहां दिष्टांत विचारि।।२९
जैसैं पिंडा वारि को, धर्यो वारि ही मांहि।
आंखिन मैं ज्यौं पूतरी, ए कछु न्यारी नांहिं।।३०
एकमेक अरु भिन्न हैं, ज्यों मृगतृसना धूप।
सेवा हित न्यारेइ से, है एक ही स्वरूप।।३१
चिदानंद मय धाम निज, चिदानंद मय लाल।
चिदानंद मय सहचरीं, सेवैं रूप रसाल।।३२
रूपरसिक हिय हेत सों, सुनों गुनों चित चाइ।
हरिभक्ति माधुरी यह कही, भक्त जनन कें भाइ।।३३

*।। इति श्री हरि भक्ति माधुरी।।*

इति हरि भक्ति सु माधुरी, भक्ति परा सुख रास।
पूरणता पाई यहैं, महा प्रेम परकास।।१
रूपरसिक रसिकेश कृत, माधुरी पंच गंभीर।
लिखी राधिकादास तहां, भांनोंखर की तीर।।२
रूपरसिक राजेश कृत, सुख जु पंच सुखरास।
महा मंत्र रूपी जु अथ, लिखत राधिका दास।।३
नेंम प्रेम तैं परसपर, परा सकल शिरताज।
ताही कौं सुख कहत हैं, रूपरसिक महाराज।।४
सो वह सुखवरनन कर्यो, पांचों सुख कै मांहिं।
श्रीहरिप्रिया कृपा विनां, कोऊ जांनत नांहिं।।५
तत्र प्रथम श्री सारसुख, लिखिते अति सुख रूप।
कृपा पाइ मन मंजरी, अद्भुत रूप अनूप।।६

## अथ सार सुख

जय जय श्री हरिव्यास जू, भक्त भूप भवनेश।
इच्छा–विग्रह हरिप्रिये, प्रगट रूप परमेश।।१
प्रगट कियो जिनि सारसुख, अद्भुत नित्य विहार।
ता महं मगन किशोर वर, निकसि न सकत लगार।।२
अमित कोटि ब्रह्मांड मैं, व्यापि रह्यो सुख सोइ।
जो सुख या सुख सार की, छाया को कृत होइ।।३
एकैं आपु अखांड हैं, अद्वय रूप अचिंत।
नित्य सखिन के चित्त कौं, सर्वस वित्त अतिंत।।४
श्री वृंदावन मैं सदा, जगमगात निशभोर।
जाही सुख जीवत रहैं, पी पी नैंन चकोर।।५
आदि सहेली चतुरधा, सोई आठ प्रकार।
तिनतैं बहुत स्वरूप ह्वै, पीवत ए सुख सार।।६
सहज सुधा सुख सार की, ललित लहलही वेलि।
फूल फलनि झूली रहै, श्री हरिप्रिया सहेलि।।७
कुंज कुंज सुख पुंज मैं, रही महा छवि छाइ।
जाकी छाया तर सवैं, डहडहाइ दरसाइ।।८
सुभग भाव की भू परैं, भरैं मिथुन मोद।
करैं केलि रति केलि की, ढरें चहल चहुँ कोद।।९
अमल कमल अंग अंस कल, रहे वहौरंग विराजि।
प्रात तरनि के तेज दवि, हेज भरे छवि छाजि।।१०
अलकलडी उरझांनि मैं, अलकलडे उरझाइ।
रूपरसिक दोउ विहरहीं, सनमुख रुख सचुपाइ।।११

*।। इति सार सुख।।*

## अथ सनेह सुख

अति ही अगम सनेह मग, क्यौं पहुंचै पग-हीन।
विना कृपा हरिव्यास की, होत कहा कछु कीन।।१
जग सनेह मैं लगि रह्यो, सो सनेह डग डोल।
विन सनेह हरिव्यास पद, है सव मींडक तोल।।२
उपरा ज्यों जिहिं हेत तोहि, लाज्यो जाहि जु लेत।
अब भाज्यो क्यों फिरत हैं, विषय विषै कैं खेत।।३
मोसौ कहनन हार तोहि, सुननहार तोसोन।
तातैं श्री हरिव्यास भजि, प्यास बुझैं ओसोन।।४
श्री हरिप्रिया सनेहिनी, जाको सहज सनेह।
विवि स्वरूप ह्वै विहरहीं, गवर सांवरी देह।।५
कल न परैं पल जल विना, ज्यौं झष विलषि विहाल।
मुहांचहीं युग जीवहीं, पी पी सुधा रसाल।।६
प्रति अंग अंग अनंग रंग, सम वैसैं सचुपाइ।
जदपि रहै रचि रति तदपि, जाचत हीं दिन जाइ।।७
अहो प्रिया मो पर ढरौ, करौ अनुग्रह एह।
निशिदिन रहैं तुव चरन की, शरन परी मो देह।।८
तुमहीं जीवन प्रान मम, तुमहीं सब सुख दान।
अहो कुंवरि करुनानिधे, कमलन कुल कलभान।।९
कृपादृष्टि रस वृष्टि करि, तिष्ठि सकल अंग अंग।
मेरी सब गति लगि रही, सब गति तुमरी संग।।१०
जव लै सेज सुधारिवौ, तव कीजो कछु बात।
मनहीं मन जानैं अहो, मुख करि कही न जात।।११

जिय चाहैं जिय सौं मिलै, हिय चाहैं हिय मांहि।
तन चाहैं तन एकता, मन चाहैं मन मांहिं।।१२
हित चाहैं हित सौं मिलैं, चित चाहैं चित मांहि।
यही लालसा रहै लगी, एक मेक होइ जांहिं।।१३
कबहु प्रिया पिय सौं कहै, मो तो हिय को हेत।
जांनत हैं श्री हरिप्रिया, जो या सुख को सेत।।१४
मेरे हू छिन कल नहीं, पलविन मुख अवलोक।
जबही लग देखत रहौं, तबहीं लग सब थोक।।१५
अरस परस यों दुहुंनि कौं, विनवत बीतत काल।
संदर कोमल करन सौं, चरन लगावत भाल।।१६
प्रिया प्रेम परजंक परि, ढरि निशंक भरि अंक।
हुलसि हिये विलसावहीं, अद्भुत सुख आतंक।।१७
या सनेह सुख मैं रहैं, जिनकौ चित्त चुभाइ।
रूपरसिक तिन हिय बसैं, दंपति सहज सुभाइ।।१८

*।। इति श्री सनेह सुख।।*

## अथ स्वरूप सुख

जिन पर श्री हरिव्यास की, अनुकंपा जु विशेष।
सोई जन भल पांवहीं, सुख स्वरूप को लेश।।१
सुख स्वरूप दोउ लाडिले, सुख स्वरूप सहचारि।
सुख स्वरूप नव कुंज मैं, क्रीडहिं व्रीड विशारि।।२
लटपटाइ अंग अंग रहे, मिथुन मनोहर मैंन।
सुखस्वरूपनी सेज पर, गहे परसपर चैंन।।३
नील कमल कर अरुन मैं, रहि अद्भुत छवि छाइ।
नाभि सरोवर जल महैं, झिलि झांईं दरसाइ।।४
दिव्य अंग की अंगता, दिपति रहति दिन राति।
अभि अंतर की विभ सवै, परतछि जानी जाति।।५
अति उमंग सौं भरत मैं, परत मोरछा अंग।
सुख स्वरूप श्री हरिप्रिया, रहत संवारत संग।।६
सुख स्वरूप कौ सुख बढ्यौ, चढ्यो रसातल सत्य।
निरखि रली बिमली अली, गावहिं मंगली सत्य।।७
जो जो सुख विलसत नवल, सहज स्वरूप उदार।
सो सो सुख सव सखिन को, सर्वस प्रान अधार।।८
खान पान तन सुधि सवै, सभरिन उदै विहान।
अति अधीर आशक्त दोउ, नहिं अवलंबन आन।।६
सुनैं सुनावैं जे कोऊ, सुखस्वरूप की केलि।
रूपरसिक जिहिं उर वढै, अद्भुत आनंद वेलि।।१०

*।। इति स्वरूप सुख।।*

## अथ सुहाग सुख

श्री हरिप्रिया प्रवीनि को, सहज सुहाग अनूप।
जाको सुख विलसत दोऊ, सहज सुहागिल रूप।।१
सहज सुहागिल सेज मैं, सहज सुहागिल लाल।
सहज सुहागिल अंग संग, वाढत रंग विशाल।।२
सहज सुहागिल रस सनैं, नव जोवन सुकुमार।
सहज सुहागिल सखिन कौ, सर्वस प्रान अधार।।३
केलि वेलि अलवेलि की, झेली सहज सुहाग।
फूलि फूलि अनुकूलि हौ, झूलि झूलि वन वाग।।४
विवस भये नागर नवल, निरखि निरखि निज नैंन।
मुदित मदन मद म्यंत मिलि, नहिं जांनत दिन रैंन।।५
एते पर अचवत रहत, अधर सुधा रस पान।
अति स्वादी अद्‌भुत दोउ, नांहिंन कोउ समान।।६
पुनि पुनि पाइन तर परैं, करि करि वहु मनुहारि।
तनक तृपति नहिं पांवहीं, महा तृखित उनहारि।।७
वदन चंद आनंदमयी, श्रवत सुधा चहुंकोद।
तोषत तन तरुनीनि के, पोखत मनसिज मोद।।८
वगर वगर मैं दिपि रही, जगरमगर दुति ऐंन।
रूपरसिक निज जनन कैं, नैंन चकोरनि चैंन।।९

*।। इति श्रीसुहाग।।*

| |
|---|
| इति सुहाग सुख समापत, भयो सर्व अघनाश।<br>अथ हौरी सुख लिख्यते, चरन वंदि हरिव्यास।। |

## अथ होरी सुख

श्री हरिप्रिया खिलारनी, खेल रसिक दोउ लाल।
ज्यौं ज्यौं विसतारत इन्हैं, त्यों त्यों बढत विशाल।।१
हो हो होरी खेलहीं, नवरंग नवल किशोर।
मदन सदन अंगन महीं, जोवन मद के जोर।।२
प्रीति रंग पिचकारि भरि, कुटिल कटाछनि धार।
छिरकत छवि सौं छैल दोउ, निज निज तनहिं निहारि।।३
उज्जल हास अवीर वहु, वर गुलाल अनुराग।
उमंगि उमंगि आनंद सौं, रमत फूल को फाग।।४
तनसुख वागे बनि रहै, सनि सनि सुमन सनेह।
सोंधें संगम सहज मैं, दिपति दुहुंनि की देह।।५
हो हो होरी वोलहीं, नेति नेति मुख बाल।
नूपुर कंकन किंकिनी, वाजे वजत रसाल।।६
झक झोरनि भुज भरनि मैं, मुरनि उरनि हिलि हेत।
भीजि भीजि रस रीझि कौ, फगुवा देत रु लेत।।७
अद्भुत होरी कौ यहै, कौतुक कहत वनैंन।
रूपरसिक जो जांनहीं, सो देखत भरि नैंन।।८

*।। इति होरी सुख ।।*

।। श्री सर्वेश्वरो जयति ।।

।। श्री निम्बार्क महामुनीन्द्राय नमः ।।

श्रीरूपरसिकदेव जू विरचित–

# नित्य विहार–पदावली

राग भैरव, पद–

(१)

राधाकृष्ण राधाकृष्ण समझिवौ सोई सुज्ञान।
यातै पर और कछू समझिवो सोई कुज्ञान।।टेक।।
राधाकृष्ण राधाकृष्ण ध्यायवौ सोई सुध्यान।
रूपरसिक होइ और आदरै नहीं कुध्यान।।

(२)

लागौ तौ मन इहिं लग लागौ।
पागौ तौ मन इहिं पग पागौ।।टेक।।
रागौ तौ मन इहिं रंग रागौ।
रूपरसिक युग अंग संग जागौ।।

(३)

प्रातकाल सुमिरि लाल लाडिली पदारविंद।
मानत निज भाग धन्य वृंदावन इंद।।टेक।।

इक सतबीस पदावली, ताकौ संग्रह सार।
लिखन करत हों रस भजन, हित पद नित्य विहार।।

मनभव संताप हरन अरुन वरन दुखनि दरन,
सरन सुख वितरन करन अंतह आनंद।
मंजुल मनि झलमलांति ललित भांति नखन पांति,
हिय सिरांति कलित कांति केलि कला कंद।।१
सहज प्रान प्रीतम पिय हेत सुरत समरकेत,
अति उपेत अद्‌भुत छवि देत जव सुछंद।
रूपरसिक रस निधान सेवत सुंदर सुजान,
विविध विधान पान ठानत मकरंद।।२

(४)

पिया संग रंगभरी राजत प्यारी।
आलस वलित खलित दृग अंजन जागी रैन खुमारी।।टेक।।
नीठि नीठि उठि बैठि सेज पर पियकौ वदन निहारी।
अंजन अधर महावर भालहिं विन गुन माल नियारी।।१
मंद मंद मुसक्यात निहारत लगी प्रेम की तारी।
फिरि परियंक अंक भरि लपटी औढ़ैं तन सुख सारी।।२
चतुर सखी लखि कौतुक प्रातहिं देत असीस सुढारी।
रूपरसिक चिरजीवौ जोरी सुंदर वर सुकुवारी।।३

(५)

प्रात उठि प्रिया कौ वदन निहारैं।
प्यारी प्यारे कै तन चाहत दोऊ दृग नहिं टारैं।।टेक।।
नैन अधखुले सिथिली पगिया बिन गुन माल सुधारैं।
अंजन अधर महावर पलकैं अलसित वचन उचारैं।।१
वार वार जमुहात सेज पर फिरि फिरि लटकि दुलारैं।
प्यारी छवि अभिलाख हियें धरि निपट कठिन प्रति सारैं।।२

सिथिले अंग वसन आभूषन कचलट लटकत न्यारैं।
मानौं भुजंग अमृत रस लुवबी अचवत नैंक न हारैं।।३
शोभा और कौंन कवि वरनैं विरिं न जात विचारैं।
रूप रसिक धनि जन्म सफल जिंह यह सोभा उर धारैं।।४

(६)

कंत कामिनी किसोर जोर भोर भ्राजहीं।
देखौ सखी देखो आज कैसे छवि छाजहीं।।टेक।।
अंग अंग माधुरी अलौकिकी विराजहीं।
अदल बदल उरझि पुरझि नील पीत राजहीं।।१
मधुर मधुर सुर अनूप नूपुरादि बाजहीं।
रूपरसिक निरखि नैंन मैंन सैंन लाजहीं।।२

(७)

आज जुवराज प्यारी आई हैं करन जंग।
जघन सुरथ गति मंद हैं मनों मतंग।।टेक।।
घूघट सुरंग राजैं पद आजैं नूपुर
अनौखे वाजैं हंसन को मोह फंद।
भौंहनि सजी कमान ऐंचत हैं नैंन बान,
बनी ठनी घन–सान करत चितै सुछंद।।१
वसन कवच साज कुंत लटैं छुटी आज
लाज पाल पेलिकैं मिटावत सवैहीं द्वंद।
सुनत हीं मिले धाय लावत दसन धाय
चाय नहीं मानैं जौलौ परै दुति चंद मंद।।२

रूपरसिक रसिकराय ऐसौ रति रन जु पाय
बढ़त अति उछाय दुहू और कौ अनंग रंग।
स्वेद कें सलिल न्हाय रहे अंग लपटाय
ओढि पटपीत कहूं पन मैं न परै भंग।।३

(८)

देखौ प्रातकाल बाल लाल केलिनी।
पौढे परयंक अंक भरि निशंक सुंदर वर
सुधाधर ससंक निकर प्रभा पेलिनी।।१
अंग अंग अति उमंग भरे भांवते अभंग,
सहज संग छवि तरंग रंग रेलिनी।।२
रूपरसिक रहसि रागि रहे विपुल पुलक पागि,
लागि लागि ललित लोभ झिलिनि झेलिनी।।३

(९)

राजै री दोउ नवल किशोर। अंग अंग रंग रंगीले भोर।।टेक
कहूं अंजन कहुं तिलक तंबोर, रूपरसिक चित वित के चोर।

(१०)

आज या प्रभात कौन जात कह्यो सुख री।
रौंम रौंम होय जोपैं कोटि कोटि मुखरी।।टेक।।
रहसि रंग रागि रहे लागि लागि रुख री।
रूपरसिक जोर स्याम गोर दरन दुख री।।

राग देवगंधार– (११)

देखि सखि प्रात विराजनि आज।
सब सुख धाम स्यांमा अंग रंग रंगीलें साज।।टेक।।

विपुल पुलक पागे निसि जागे रस रागे रतिराज।
तहू तृपति नहिं होत तनकहू अनतृपतिन सिरताज।।
दूनी दूनी चोंप चढी चित रहत वढी तजि पाज।
रूपरसिक रस वादि दोउन कों दरसत है यहि काज।।

(१२)

सहज दोउ सुखके सिंधु सरीर।
स्यामा स्याम स्वरूप उजागर नागर गुन गंभीर।।टेक।।
अंग अंग उठत तरंग रुचि उमंग नेह नवनीर।
रूपरसिक जन अचवत है निति सुरस सुधा की सीर।।

राग रामगिरि—

(१३)

रति रंगभीनैं अंग लागि लागि।
सुखद सेज सोये दोउ सज्जन सुरत समर सजि जागि जागि।
छिन छिन प्रति प्रति प्रतिछिन प्रमुदित प्रेम पियूषहिं पागि पागि
रूपरसिक रस वरषन हरषत अनुरागी अनुरागि रागि।।

(१४)

अरी इन्हें सौरि संवारि उढाय।
सरकि रही पायन पर सिरतैं सीत सतावत आइ।।टेक।।
निरखत ही निरखत निसि वीती तौउ तौ तनक अघाय।
रूपरसिक रस रहचट लागी लहत न तनु तृपताय।।

(१५)

मैं तौ कैई वार सवरि उढाई।
राखत नाय तनकहू तन पर परी प्रकृति अपटाई।।टेक।।
नहिं जानत मानत कहा मन रुचि वस मैं अकि विवसाई।
रूपरसिक जु घुरि सोवन मैं होत परम गरमाई।।

राग ललित–

(१६)

जगे दोउ ललन।

सोये सुख सेज हेज भरि विछुरत पलन।

विती विभावरी वितन खेल मैं तौउ केलि विन कलन।।

(१७)

उनीदे नैन मैंन रंग भीनैं सलज हसोंही सैंन।

रतनारे कारे रुढरारे अति अनियारे ऐंन।।टेक।।

झपकौंनैं दौंनैं रस केरे सहज सलौंने मन हरि लैंन।

रूपरसिक सहवगे सुहागे अनुरागे जागे रैंन।।

राग विभास–

(१८)

सुरझाइये मेरी नकवेसरिसों तेरी सों अलकैं उरझ रही।

अरवराय वर सौं ऐंचउ जिनि जतन जतन करसों करही।।टेक।।

सुमन नेह मैं सनी सिलसिली देखहु मुक्त लरनि सों अरहीं।

करत कहा निरवारत क्यों नहीं रूपरसिक भये भुरहरही।।

(१९)

आज विराजत आलीरी नवल किसोर।

अरस परस अंसनि भुज दीनैं अति रंगभीनैं भोर।।टेक।।

गौर स्याम अभिराम सु छवि लखि लज्जित काम करोर।

रूपरसिक जन मन सुखदायक मिथुन मनोहर जोर।।

(२०)

लागौं या छवि की मोहि बलाय।

ऐसैं ही निति प्रति नियहत रहौ सब दिन सहज सुभाय।।टेक।।

हम हूं ओरनि कोंरनि दुरि मुरि देखहिं द्रिगन अघाय।

रूपरसिक जनकी जीवनि तन मन की मंगलदाय।।

राग विलावल–

(२१)

री रंगभीनें दोउ लाल की छवि निरखौं नैंन निहारि।
लागत हैं कैसी लुनियाई अंग अंग की उनिहारि।।टेक।।
सीसफूल संग सोहहीं लगबगी चंद्रिका मोर।
पगिया पगिया पगसों सगवगिया सारी कोर।।१
अलक अलक सों अरि रही करि तिलक तिलकसों नेह।
अरस परस फवि फवि रही नहीं आवत छवि को देह।।२
कुंडल कुंडल झिलिमिली मिलि विमलि विमलि कपोल।
अधर अधर दसनावली पुनि रंगी रंग तंवोल।।३
बेसरि बेसरि विहसहीं वनि वनि जू वनकई वेस।
नैंन नैंन सौं निपट ही ठनि ठनि जु रहे हैं ठेस।।४
भौंह भौंहसों भिरि परी रस भोय होय तिरछौंह।
बढ़ि बढ़ि बातैं करत हैं चढ़ि चढ़ि चोंपें अमितोंह।।५
चिवुक कंठ कर आदि दै आभरन छके छवि छाक।
जतन अनेकहिं जोजिकैं जिय एक एक की ताक।।६
जब तब दूनी देखियें उनी न अनावत ओप।
रूपरसिक दोउ कौतुकी न सुहावत छिनहुं विछोप।।७

(२२)

आवौ आवौरी अली आवौ,
लाडिली लालन के गुन गावौ।
गाय गाय चित चोंप चढ़ावौ,
उरन अधिक आनंद बढ़ावौ।।

बढावौ आनंद अधिक उरन सु मिथुन मनमुद मानई।
सुनि सुनि श्रवन निज सुजस संपति जियमैं निज करि जानई।।
रति रंग विलसे सकल निसि तौउ तृपति तनक न आनई।
अति अकथ इनिकी कथा कहि मुप कौंन विदुख वखानई।।१

अंग अंग अनंग उमंगनि आढे,
अधिकत निति चित चोजनि चाढे।
महाधीर मति गति मैं गाढे,
विपुल विपुल पुलक वारिध से वाढे।।

वाढेव बारिद से विसद वर विपुल पुलक न मांवहीं।
अचगरे अमृत सुरसके दोउ दिनहि कुंवर कहांवहीं।।
सिरमौर सब जन जदपि तदपि और कछु न सुहावहीं।
सरसात ही दरसात ज्यौं बरसात बन बरसावहीं।।२

प्रति प्रति छिन अनुदिन अनुरागे,
जब तब लषियतु लालच लागे।
सकल कला कुल भरे सभागे,
किहूं जतन करि जात न थागे।।

थागे जु जात न किहुं जतन करि रहे ढरि अति ढार मैं।
बहुभतनि हेरैं हैं नहीं घटती अगाध अपार मैं।।
सुखदाय सहज सुभाय सब गुन दिपहि दोउ सुकुंवार मैं।
गहि टेक एक अनन्य व्रत वितरत सु वुधि विहार मैं।।३

मृदु मूरति अतिरति रस वोरी,
सुथिति थांवरी सांवरी गोरी।
चाहत निति प्रति चितवित चोरी,
चतुरि चारु चूडामनि जोरी।।

जोरी सू चूडामनि चतुरि अति दैंन उपमा कौन हैं।
जग मैं न विधि कोउ रची ऐसी अखिल लोक अलोन हैं।।
इनि तैं वरन जे विमुख नर जे भ्रमत भव कें भौन हैं।
मन वचन क्रम पहिचांनि जिनिकी रूपरसिकन सोन है।।४

राग आसावरी–

(२३)

वैठे सुभग सिंघासन दंपति सजि सव सोभा संपति।
देखतहीं वनि आवत यह छवि कहत होत मति कंपति।।टेक।।
अति सुंदर मनहर मृदु मूरति सकल कला जित जंपति।
रूपरसिक रसिकन उर अवनि सु वरषन वन वरषंपति।।

(२४)

सलोंनी सोहनी मनमोहनी मंजुल मनि की माल।
पहरैं पिय प्यारी प्रानन तैं उर अलवेली वाल।।टेक।।
सौरभ सनी वनी बर वांनिक विचि विचि मानिक लाल।
अति अनूप सुंदर गुन पोही रूपरसिक रस–जाल।।

(२५)

जोई लगनि लौंनी जो लागैं दोउ लाल सों।
और लगनि सब दगन दरी सम जरी जगत जंजाल सों।।टेक।।
यह अनुदिन अमृत अचवावत भरि पुट नैंन विशाल सों।
पलकन अंतर परत ररत रहैं रसिक सुरूप रसाल सों।।

(२६)

यह आसा हमरे मन मांही निरखत रहैं सदाही।
श्रीराधा माधौ मृदु मूरति अनुदिन छिनों छिनाही।।टेक।।
महल टहल अनुराग पाग मैं अनमित अंग पगाही।
रूपरसिक निज जांनि जुगलवर करहु कृपा बलि जाही।।

राग धनासरि–

(२७)

प्यारी तैं रूप ठगौरी डारी।
चितवनि विहसनि चलन चातुरी, मोहे लाल विहारी।।टेक।।
वंक कटाछि वांद कै वेधे विहसनि सुमन विचारी।
मंद चलनि मत गजमद मानों अंग अंग छवि भारी।।१
सरव सिरोमनि करि वस–वरती विहरत विपन मंझारी।
रूप रसिक स्वामिनि सुभाव पर डारौं तन मन वारी।।२

(२८)

राधे प्यारी तें मोहन वस कीनौं।
सकल लोक जाकैं वस वरतैं सो तेरैं आधीनौं।।टेक।।
नाचत गावत वेन वजावत तोसो सरवस हीनो।
रसना अंग रूप रस चितवनि तेरे ही रंग भीनौं।।१
तू कित पढी यहै कमनेती करि राख्यौ लय–लीनौं।
रूप रसिक कहि देहु हमहिं वलि यह महतई कौ मीनौं।।२

राग–सारंग–

(२६)

दोउ जन नैंनन ही वतरावैं।
स्यामास्याम सखिन के संगहिं भेद न कोउ पावैं।।टेक।।
रहसि रंग राते रसमाते छाके वुधि विसरावैं।
कहत नटत रीझत खिजिआवत हिलत मिलत लगि जावैं।।
मनहीं मन विव अंक भरत पुनि हिय आनंद वढावैं।
चोरा–चोरी चलत कटाछनि सब की दीठि बचावैं।।२
जानति जिय की वात जोई यह जाहि जु आप जनावैं।
रूप रसिक वड भागनि सहचरि निपट निरंतर ध्यावैं।।३

(३०)

काके नैंन हैं अति लोनें।

कुंज महल प्यारी प्यारे दोउ वदत परस्पर गौंनैं।।टेक।।

दर्पन लयैं हाथ मुख जोरैं तीछन चपल दुहौंनैं।

आयत सम मापत अंगुरिन सौं अरुन वरन रुचि कौनैं।।१

तौहू अरत न रहत प्रिया हरि सहचरि बोलि दिखौंने।

रूप रसिक कहैं स्वामिनि सरसी अंजन तैं दिवि दौनैं।।२

(३१)

नीकैं छिरकत नवल कुंवर वर मैंन मदभरे नैंन फुहारे।

हृदय होद तैं निकसि नेह जल अंग अंग भरत प्रेम की धारे।।

सघन सवै की नीव नितावन फूलैं फलैं वेलि विसतारे।

रूपरसिक हिये सव सीतल कीये तीछन चपल कटाछिनि हारे।।

(३२)

जमुना कूल कदम की छंहियां गरवहियां दीयै बैठे दोऊजन।

वीन मृदंग बजावत सहचरि गावत सारंग प्रेम मगन मन।।

अरस परस रस रंग वढावत विपुल पुलक न समावत हैं तन।

रूपरसिक निरषत हियैं हरषत नैंन न पल लागतरी निमषन।।

(३३)

स्यामा स्याम दोउ रंग भीनैं।

ठाढे कुंज कदम की छहियां गरवर बंहियां दीनैं।।टेक।।

वह वंसी वह मुख मनु कोकिल ताल तान मिलि गावैं।

वृंदावन फूल्यौ फुल फलियौ सारंग राग सुहावैं।।

तरु पंछी मृग नीर वेलि गिरथकित भये सुनि ताही।

जुगल किसोर जोर छवि ऊपर रूप रसिक वलि जाही।।

(३४)

मध्य दुपहरी मंजन मिसि मिलि
झूलत सब जमुना जल मांही।
स्यामा स्याम सहेलिन संगहि
अति रस रेलिन केलि वढांही।।
छिरकत फिरत नैंन रंग राते
लै चुभकी जितही चलि जांही।
प्यारी परसि वहुरि निज संगनि
निकसत नांहिन भेद जनाहीं।।
सैंनन हीं सैंनन दोऊ जन
वहु विधि मन अभिलाष पुराहीं।
रूप रसिक ललना लालन छवि
लखि रही चित्रलिखी तिह ठाहीं।।

(३५)

देखिरी देखि सहज सजनीरी
ग्रीषम रितु हिम रितु सी लागति।
प्रेम फुहार परत रहै निसदिन
दंपति अति रति रस मैं पागति।।टेक।।

आलिंगन मर्दन नख लावनि
रदन वदन छवि सों अवलोकनि।
मिटत ताप विनतन के तनकी,
सदा रहत हरख विन सोकनि।।१

नित्य वसंत वसत वृंदावन,
निज जन मन के पुरवन कामहि।
रूप रसिक वलिहारी जइये,
निरखि निरंतर स्यामा स्यामहिं।।२

(३६)

स्वस्ति श्रीवृंदावन सर्वोपर राजमान
सकल सुख निधान जहां विहरत पिय प्यारी।
महा मृदुल सेज हेज हिलि मिले हुलास
कमल कुंज आस पास मंजु मुदित मधु लिहारी।।टेक।।
गावत सारंग उदित कोक कला अंग अंग
निरखि निरखि होत पंग संगनि सहचारी।।१
रसिक रूप रास रवन नवन केलि कवन करत
भरत अंक ह्वै निसंक मदन कदन कारी।।२

राग नट–

(३७)

आली तेरे नैंन चितवित चोर।
वचत नहिं कोटिक उपायन, अजहुं निस पुनि भोर।।टेक।।
बुद्धि चौकी उलंघि छिनमाहिं हिये लों करि दौर।
मन सुसंगी पूठि राखत निस चरन सिरमौर।।१
वाट पार तव लषत न कीनैं जु अपनैं जोर।
रूप रसिक सु प्रान पिय प्रिया चाहत तेरिय ओर।।२

(३८)

प्यारी तेरी येहै कपटी वानि।
वनिज पहलैं रचत रस रचि, करत पुनि विरचानि।।टेक।।

दीठि दै मन लियौ पलटहि महामंदहि जानि।
जतन कछु जान्यों न जव जिय लोभ कै ललचानि।।१
अजहु जिनि कौ देहु जिनिको ठनत नांहीं ठानि।
रूप रसिक अन्याय मैं कहा आय परिहैं पानि।।२

(३६)

प्यारी तू कमनैंती कित पढी।
विनहीं पनिच वेधि हिय डारैं भौंह रहत नित चढी।।टेक।।
विनही साधैं नैंन बान तुव जात दुसारही कढी।
कुटिल कटाछि लाग लाघवता चोज मनोजनि वढी।।१
छलवल सकल कला जा आगैं रहतन तनकहु दढी।
रूप रसिक चटसार समर कैं रारिहि रारि रढी।।२

(४०)

लाल मन ललना लगत सलोंनी।
ज्यों ज्यों सीतकार मुख नांहीं त्यों त्यों दोंनी दोंनी।।टेक।।
कवहुक हिलिमिलि केलि करत पुनि छिन छिन में सतरोंनी।
छिन महिं हसत छिन महीं गावत छिनही में विलखोंनी।।१
कबहुक तरतरि वाहु कंध धरि गहैं डार करि मोंनी।
रूपरसिक पियकैं उर लपटति तरल तरंग चितोंनी।।२

राग पूरवी—

(४१)

सषी मिलि फूल लैंन वन आईं।
मानहुं मुनियां झुंड सकल मिलि, लालन संग सुहाईं।।टेक।।
चुनि चुनि सुमन सिंगार सजावहिं छवि पांवहिं अधिकाई।
रूप रसिक लखि प्रिया परम रुचि, उमंगन अंग समाई।।

(४२)

अनौखे वैंनी गूंथन हार।

लागे नीर चुचांन पुलक तन नीठि सुकाये वार।।टेक।।

कंपत कर नहिं रहत चिकुर थिर विथुरत जात अपार।

तुम ते बन बिसतारन बन मैं भले मिले त्यौं नार।।१

तजहु अबहि हम इमिहिं सुधारैं सुंदरवर सुकुंवार।

अधिक अधिक अधिकात कहा अहो रूप रसिक रिझवार।।२

राग गौरी—

(४३)

लाल उर वसी उरवसी प्यारी।

मनि भूषन कौं धरत उतारी ए कवहू नहिं न्यारी।।टेक।।

जगिमगि रही जोति धरि सोभा—गोभा आनंदकारी।

प्रेम डोरि गूँदी रस फूंदी वहु रंगी रंग भारी।।१

नहि अरसात भारहु नांही लगी रहैं इकतारी।

रूपरसिक यह सोभा निरखत करि तन—मन—वलिहारी।।२

(४४)

कौंन तप कीनों नथ कै मोती।

अधर सुधा अचवत रहैं निसिदिन नैंक न परत विछोती।।टेक।।

पलपल मांहि पियाधर परसें सरसें सुख सरसोती।।१

रूपरसिक अधिकहि अधिकहि अति बढत जात निति जोती।।२

(४५)

विहरत कमल—कुंज सुखकारी।

तेज—पुंज रस—पुंज छवीले करत केलि भुज भारी।।टेक।।

प्रेम परस्पर क्रीडत दोऊ व्रीडत सुरत रतारी।

तान तरंगनि रंगनि अंगनि लेति परम सुकुंवारी।।१

अलग लाग अद्‌भुत गति निर्त्तति अति रतियति विसतारी।
रूप रसिक नूपुर रव ऊपर कोटि काम वलिहारी।।२

(४६)

धुनि सुनि स्याम जु गाई गोरी।
संध्या समय सहज सुख संचय लय सनमुख रुख गोरी।।टेक।।
सकल कला सिरमौर सुघरवर जलपि जील सुर गोरी।।१
रूप रसिक उमंगी सरवेस्वरि स्यामा गुननिधि गोरी।।२

राग कलयान– (४७)

अहलादनी श्री राधे रानी।
आनंदरूप सहज सुंदरवर वृंदावन जाकी रजधानी।।टेक।।
मन इछा पूरन दंपति की यातैं सकल कला जग जानी।
विविधि भांति भव–भेद भाव–रस रहसि रंग सेवैं सुखदानी।।
बहु विसतार करन कवि को है
इनिहीं तैं जो हैं जगवानी।
रूप रसिक जन मन भांवन जस
अखिल अंड रह्यौ पूरि प्रमानी।।

(४८)

मंगल मूल राधिका रानी।
मंगल स्याम स्थंभ सखी सब
दीरघ लघु साखा सुख दानी।।टेक।।
पात सुगुन पुस्पित मंद मुसकनि
सुफल अर्थ पूरन परमानी।
सुरस प्रेम पीवत अमृत सम
नेह वेलि चहुंधा लपटानी।।१

छाया सरनि संत पंछीगन
बोलत मधुर सुधारस वानी।
रूप रसिक कहँ कलप वृक्ष कहा
अद्‌भुत गति या तरु की जानी।।२

(४९)

को बरनें कवि रूप उज्यारी।
विधिना रचित न होय यहै छवि
अति अनूप आनंद अविकारी।।टेक।।
जाकी जोति सकल जगमग है
उपमा कहन कोंन वकतारी।।१
रूप रसिक राधे मोहनि कैं
बस भये मोहन मदन विहारी।।२

(५०)

तू मन मोहनी प्यारी मोहे मोहन राय।
छवि धरि का मन तैं किया प्यारी रहे रूप ललचाय।।टेक।।
मावस निधि पाटी लसै अरु अक्षत मोती मंग।
चुकटी चितवनि डारिकैं वर वैंदा लाल सुरंग।।१
दीप दिपै द्युति देह की डोरी गुन संग सुहाय।
पहुप गूँदि मनभव सुमन तोरी वानी मधुर सुभाय।।२
सरस करस कुच राजही ऊपर राजी रोम सुधूप।
कदलीवन उरु वनैं ता ऊपर कांची अनूप।।३
नूपुर घंटा नाद कियैं लियैं अंग अंग भूषन भेट।
परिपूरन उपचारन सों ह्वै सकहि न कबहू मेट।।४

यह गति तोही मैं लखी नहिं और ठोर वलि जाउं।
रूप रसिक जन न्याय कहत मन मोह मोहनी नाउं।।५

(५१)

जनम जलधि पानिय जग उपमा महंगै मोल विकावैं।
विसद सुजस जलपत जन जाकौ मुकता नाम कहावैं।।टेक।।
लागौ रहत गरैं निति-प्रति ही हिय पर अति छवि पावैं।
कुच उच पद परसत ही दरसत दूनी दुति दमकावैं।।१
को कहैं तेरे भाग की महिमा अंग संग सदा रहावैं।
रूप रसिक प्यारी पिय तोकों अधरामृत अंचवावैं।।२

(५२)

अधर सुधाकै लोभ लाग्यौ अनुराग्यौ तप
तपत सभाग्यौ उर पाग्यौ पीनपन हैं।
ऊरध चरन करि वंध्यौ प्रेम तंत तर
फरत करत मोन मंत्र को जपन हैं।।टेक।।
मेरे जानिवे मैं निहचैंही यह आवत हैं
लावत हैं रति-रस-चसको जतन हैं।।१
रूप उजियारी अहो प्यारी तुव बेसरि मैं
मोती नहि होय मनमोहन को मन हैं।।२

राग कानरी-

(५३)

ककरेजी सारी तन पहरैं छवीली प्यारी
सोने की किनारी तासों मिलि छवि छाई है।।
गोरे गोल कुचन पै कंचुकि कसोंभी झीनी
सोंधैं भीनी खमकि खयेंन पैं खुमाई हैं।।टेक।।

तैसौ अतलस्यौ लस्यौ कस्यौ कटि लहंगा
सुमहंगा सुमोल मंजु रंजु रंजुताई हैं।।१
सादेई सिंगार साज स्यामा जू विराजत हैं
रसिक स्वरूप सोभा देखिकैं लुभाई हैं।।२

(५४)

कोकनद केतकी कदंव कुरविंद कुंद
केवर कनीर केरि केसरि सुमन मैं।
मौलसिरी मल्ली मालती चमेली चंपक मैं
जुही मैं लुभाय आय लुभ्यौ है लतन मैं।।टेक।।
अंग अंग माधुरी के झोरन मैं झूमि झूमि
घूमि घूमि सरस सुगंधन के गन मैं।
रहैं मंडरानों मनमोहन कौ मन महा
रसिक भयोरी तेरे रूप तन वन मैं।

(५५)

कौंन सों करत इती रिस प्यारी
प्यारो रोम–रोम में रमि रह्यौ।।टेक।।
कच कुच लटपट लोयन वरुनी भौंहन मैं उमह्यौ।।१
रूप रसिक न्यारौ न होय कहुं इहि विधि वनक वह्यौ।।२

राग अडानौं–

(५६)

खंजनतैं नीके हैं ए कंजनतैं नीके हैं
कुरंगनतैं नीके हैं ए नैंन अति नीके हैं।
ऐंन सुखही के हैं ए चैन सबही के हैं
ए चोर चितही के हैं हरन हरि ही के हैं।।टेक।।

मीन सरसी के उभ उड रजनी के रूप
रसिक रसी के प्रान जीवनि ए जीके हैं।
टौंना ए वसी के हैं निमोंना मोहनी के हैं
खिलोंना रति-पी के हैं कि दोंना द्वै अभीके हैं।।

(५७)

परम प्रवीनता तिहारी बलिहारी यह
पेखि पेखि आवत हैं मेरें मन तावरौ।
सनमुख रुख ऐसैं चितवैं चकोर जैसैं
भ्रमत रहत तैंसैं मालतीपैं भौंवरौ।।टेक।।
मेरैं जान कहा मन राख्यौ है जु मांन करि
नां न करि महासुखदान तेरौ नांवरौ।
रसिक स्वरूप सुनि स्वामिनि सुजान मनि
दामनि सी देह अरु एह घनसांवरौ।।

(५८)

तोसी न निहारी मैं तिहारी सोंह मोहिरी।
करत इतै पै प्रान प्रीतम सों मान मन
कोनव सयान यह सिखयो है तोहिरी।।टेक।।
सदय सुद्रिष्टि रस–वृष्टि करि प्यारी अहे
प्रान प्रतिपाल रहे लाल–मुख जोहिरी।।
रूपरसिक वस रहत सदाई वलि,
तासों यह दुचितई उचित न होंहिरी।।

(५९)

हिलमिलि विलसि हमैं हूं सुख दीजिये।
अति ही उदारि प्यारी इतिनी न कीजिये।।टेक।।
कोमल तमाल लाल अंक भरि लीजिये।
कंचन की वेलि ज्यों लडेलि लपटीजिये।।१
सरल सुभाव ही तैं सब विधि जीजिये।
रूपरसिक महा मधुपान पीजिये।।२

(६०)

नागरि निशंक ढरि अंक भरि लियौ लाल।
सुख सचवायौ अचवायौ लै सुधा रसाल।।टेक।।
हिल मिलि रंग रस वाढ्यौ अति ही विशाल।
रूपरसिक भई परम कृपाल वाल।।

(६१)

मोर चंद्रिका मैं चियरा मैं चारु चौसर मैं
केसरि की खौरि मैं खरौई खिलिकैं लसैं।
केयूरकरन मैं छरी मैं छुद्र घंटिका मैं
मुरली मैं मिलि रसै मधुर सुधा–रसैं।।टेक।।
पीतांबर मैं प्रवेश करि ररि नूपुर मैं
अति ही अनूप रूपरसिक जपै जसैं।।१
जोइ जोइ अंगी कृति कीनों तुम स्याम तामैं
राधेजू के नाम कौ रकार सब मैं बसैं।।२

(६२)

राधे नाम सुन्यों जब स्याम।
बढी विपुल पुलकावली अंग अंग भये सकल सब सुख के धाम।
रोम–रोम रस रंग रगमग्यौ पग्यौ प्रेम मन पूरन काम।।१
रूपरसिक वडभाग मनावत अनुरागी अपनों अभिराम।।२

(६३)

कर लै दरपन स्यांम दिखावत
स्यामा जू संवारत सीस के मोती।
इकटक रहे निरखि सुंदर वर
सुधा सदन ससिवदनी की जोती।।टेक।।
रूपरसिक रस–चसक चसे चखि
लखि लखि सखी सोभा अनहोती।।१
कहत न बनत बनक मोपैं मुख
सुधि वुधि सरव भई समनोती।।२

(६४)

निज–करिसेज संवारी सचि–सचि
पोढियैं जू प्यारी बलि जाऊ।
सुमन-सुमन विचि रचि-रचि पचि-पचि
सुभग वे सारी बलि जाऊ।।टेक।।
सौरभ–सनी धनीधन कैं हित
चित दैं चतुरारी बलि जाऊ।।१
रूपरसिक सुख विलसहु हुलसहु
हों बलि बलिहारी बलि जाऊ।।२

(६५)

लाल संग लै पौढी ललना।
उरसों उर लपटाय रहे भरि
अंक निसंक रहसि रस रलना।।टेक।।
उदित अनंग अंग अंगनि मैं
निरखत पलहु लगत द्रिग पल ना।।१
रूपरसिक दंपति अति रति कल
कमलकेलि विनि क्यौं हू कल ना।।२

(६६)

राजत रंगीले दोउ रंगमहल रसमसे।
मृदु–मृदु मुसुकात महा–मोद न समात मन
वात वतरात जात गात गुनन में गसे।।टेक।।
ओढैं पट एक पौढे भरि निसंक अंक निपट
मानहुं सुख–सरवर मैं लसे मुख मयंक से।
रूपरसिक नव किसोर कुंवर जोर स्याम गोर
बसहु उरसि मोर यों किलोर करत रति रसे।।

(६७)

पलकैं झपकति प्रियाजू की ज्यों ज्यों पियदै फूंक जगावै।
त्यों त्यों तरुनि तरेरे त्यौंर सों सोंहनि भौंह चढावैं।।टेक।।
कवहुंक कर पलवनि सों कोमल चट चटुकी चटुकावैं।।१
रूपरसिक जव प्यारी पियकै ललकि कंठ लपटावैं।।२

राग केदारौ–

(६८)

अरी रंग भीनैं री लाल दोउन निकुंज रस भवन।
हिलि मिलि हेज सेज सुख बिलसत विशद कलाकुल कवन।।
अंग–अंग उदित अनंग मुखर कवहुं मुख भवन।
रूपरसिक उर वसौ लसौ लड लडीले रवनी रवन।।

(६९)

करत कवनीय किसोर कुंवर बर नीराजन नैंननि सौं।
प्यारी जू के वदन चंद्र की चोंप चढे चैंननि सों।।टेक।।
चोज मनोज मुदित मन रंजन सहज सोंज सैंननि सौं।
रूपरसिक रस रहचट लागे रागे रंग रैंननि सौं।।

राग झंझेटी–

(७०)

प्यारी जू तुमही हौ गति मेरी।
चूक छिमा करिये दुष हरिये जू हौं
तेरी जनम – जनम की चेरी।।टेक।।
भ्रमिय वहुत वन–वन वलि जाउं ए जू,
लहिय न तनक हौं सुख की सेरी।।१
दीन–हीन पर दया द्रवन की,
जू तुम बिन कहौ सरनि किहिं केरी।।२
इहिं अवसर अव परहरिहौ तौ,
जू कहां सरनि मौहि मिलि है जू तेरी।।३
भवसागर मैं वहीय फिरत हों,
जू महामोह दुरमति की घेरी।।४

अनुचरि परि अनुकंपा कीजे ए,
जू दीजे अब मोकों दरस दरेरी।।५
रूपरसिक जन जानि आपनी,
जू राखियैं चरन कमल सों नेरी।।६

(७१)

अबकैं तो करुणा कियेई बने बलि।
भव–सागर विकराल विपुल ताकी,
भवन–जाल तैं बांउ कहां टलि।।
औगुन खांनि जानि आनाकानी जू,
जो उर आनी तौ नहि कहूं थलि।
हो मतिहीनि मलीनि करम की जू,
तुमतैं बिछुरि गई रज में रलि।।
कलपांतर कहूं जाय परोंगी जू,
तो कब ऐंहूं तुव पद ढिग ढलि।।
वही आज्ञा उर मैं सुधि करिये जू,
तू मेरी है रूपरसिक अलि।।

(७२)

मेरौ कछु बस नाहिन करुणामई।
सुधि बुधि भूलि भरम भटकति हों जू,
करमन करि प्रतिकूल भई।।

ज्यों ज्यों सुरझाऊं त्यों त्यों उरझत जू,
ऐसी दशा कोउ आय गई।
सुधि वुधि बिसरि विकल विलपति हों जू,
या जग की त्रयताप तई।।
जानत सब जनके जिय की जू,
तुम ते कोन दुरी हे दई।
रूपरसिक अलि कहां यह कहां यह जू,
उचित नहीं बलि होति नई।।

*।। इति श्री नित्य विहार पदावली संपूर्ण।।*

| |
|---|
| नित्य विहार पदावली संख्या लिखी वनाय।<br>द्वै सत ऊपर पचहत्तरि समझहु श्लोक सुहाय।। |

।। श्रीसर्वेश्वरो जयति ।।

# अथ श्रीयुगल रस माधुरी

जय जय श्रीहरिव्यास देव, दिन–विदित विभाकर।
भ्रम, तम, श्रम, अघ औघ हरन सुखकरन सुघरवर।।१।।

कृपासिन्धु आनन्दकन्द दम्पति रसभीने।
मोसे मूढ़ अनेक पतित जिन पावन कीने।।२।।

जासु कृपा परसाद जुगल–रस जस कछु गाऊँ।
सब रसिकन कौं हाथ जोरि पुनि शीश नवाऊँ।।३।।

श्रीवृन्दावन सघन सरस–सुख नित छबि छाजत।
नन्दनवन से कोटि–कोटि जिहि देखत लाजत।।४।।

जहँ खग–मृग–द्रुम–लता बसत जे सब अविरुद्धित।
काल, कर्म, गुण, काम, क्रोध, मद रहित सहित हित।।५।।

परम रम्य घन–चिदानन्द सर्वोपरि सोहै।
तदपि जुगलरस–केलि काज जड़ ह्वै मनमोहै।।६।।

तैसिय निर्मल–नीर निकट जमुना बहि आई।
मनहुँ नीलमणि–माल विपिन पहिरें सुखदाई।।७।।

अरुन, नील, सित, पीत कमल–कुल फूले फूलनि।
जनु वन पहिरे रंग–रंग के सुरँग दुकूलनि।।८।।

इन्दीवर कल्हार कोकनद पद्मनि ओभा।
मनु जमुना दृग करि अनेक निरखति वन शोभा।।९।।

तिनमधि झरत पराग प्रभा लखि दृष्टि न हारति।
निज घर की निधि रमा रीझि जनु वन पर वारति।।१०।।

सरस सुगंध पराग छके मधु मधुप गुंजारत।
मनु सुषमा लखि रीझि परस्पर सुजस उचारत।।११।।

पुलिन पवित्र विचित्र चित्र चित्रित जहँ अवनी।
रचित कनक मनि खचित लसत अति कोमल कमनी।।१२।।

सुघट घाट बहुरंग छबीली छतरी सोहैं।
कुसुम–भार झुकि लता परसि जल मनको मोहैं।।१३।।

जल में झाँही झलमलाति प्रतिबिम्बित सरसें।
जल के भ्रमर तरंग रंग रंगनि के दरसें।।१४।।

तट पै ताल तमाल साल गह्वर तरु छाए।
सभाकाज ऋतुराज वितान मनहुँ तनबाए।।१५।।

कल्पवृक्ष संतान पारिजातक हरिचन्दन।
देवदारु मंदार अगर अम्बर मलयजघन।।१६।।

तिन पर चढ़ि कर लता उच्च अति फूल झरत खिलि।
मनु विमान चढ़ि देववधू वरषति कुसुमावलि।।१७।।

तुलसी, कुंद, कदम्ब, अम्ब, निम्बू बहुरंगी।
वट, अशोक, अश्वत्थ, अगस्त, आमर्द, पतंगी।।१८।।

कोविदार, कचनार, बंस के विरवा चोखे।
विजयसार, शृंगारदार, अरु चारु अनोखे।।१६।।

अमलवेत, आरू, अँगूर, अञ्जीर, अमृतफल।
बरना, आरिनी, कर्निकार, कलियार, बेत भल।।२०।।

सेमर, तिंदुक, मधुक बिल्व, पापरी पलासा।
सरस, बहेरा, कुरा, कैथ, कमरख, सविलासा।।२१।।
सीताफल, अरु जम्बु और बदरीफल श्रीफल।
पिस्ते, पाडल, पनस, हरर, बढ़हर, बदामकल।।२२।।
खारिक, खिरनि, खजूर, दाख, दाड़िमहि, विजोरे।
नासपाति, नारंगि, सेव, सहतूत, लिसोरे।।२३।।
जाइ, जायफल, वकुल इलाइची, लौंग, सुपारी।
कदली मिली कपूर महरि जिहि लगि रहि भारी।।२४।।
केतकि अरु केवरा नागकेसरि केसरि अति।
मेंहदी अरु माधवी, मधुरि, मल्ली, अरु मालति।।२५।।
फूली चम्पक फैलि रही जिहि सुगंध विसाला।
निजगुन मनहु प्रकाश लसति नवजोवन बाला।।२६।।
जुही, चमेली, फूलि रही अस लगति सुहाई।
सरदजोन्ह जनु जुगल–दरस हित विहँसति आई।।२७।।
नागबेलि बेला प्रवाल को है विस्तारा।
नरगिस, मुक्ता, मदनबान, मोगरा निवारा।।२८।।
सुगन्धार, सतवर्ग, जीवबन्धूक अरु दौना।
गुलहबांस बहुखिले मदन के मनहुँ खिलौना।।२६।।
सूरजमुखी, गुलाब, गुलाला, नाफर मानो।
सोनजुही, सेवती, सरूं लै बिच–बिच ठानों।।३०।।
और लता बहु भाँति जाति कापै कहि आवति।
एक एक ते अधिक जुगल हित छबिहि बढ़ावति।।३१।।

कोउ छोटी कोउ बड़ी कोउ अधबिच की जानी।
गुलम–लता उलही अनेक अवनी लपटानी।।३२।।

सुरतरु सम द्रुम–बेलि जाति सब सुखकर श्रेनी।
चिंतामनि महि सकल बनी चिंतित–फल–देनी।।३३।।

द्रुमबल्ली संकुलित सकल अस लगत सुभग तन।
मनु जड़ ह्वै निज तियहि सहित सेवत सब सुरगन।।३४।।

बौर–मंजरी–मूल–फूल–फल–दल–मनि–मोती।
ओतप्रोत प्रतिविम्ब परत अगनित छबि होती।।३५।।

मुकुलित पल्लव फूल सुगन्ध परागहि झारत।
जुगमुख निरखि विपिन जनु राई–लौंन उतारत।।३६।।

फूल फलन के भार डार झुकि यौं छबि छाजैं।
मनु पसारि दइ भुजा दैन फल पथिकन काजैं।।३७।।

मधु मकरन्द पराग–लुब्ध अलि मुदित–मत्त मन।
विरद पढ़त ऋतुराज–नृपति के मनु वन्दीजन।।३८।।

सुवा सारिका पढ़त कोकिला कूक मचावत।
मनहुँ टेर दै पथिकजनन कौं टेर बुलावत।।३६।।

चातक, मोर, चकोर, शोर चहुँ ओर निकाई।
रतिपति–नृप के दूत देत जनु फिरत दुहाई।।४०।।

राजहंस कलहंस बंस यौं शब्द सुनावत।
मनहुँ सप्तसुर मधुर साज मिलि गंधर्व गावत।।४१।।

सुधा-सलिल सरभरे विमल कमलनि जुत अलिगन।
निगुन–ब्रह्म जनु सगुन होइ सोहत मोहत मन।।४२।।

ठौर–ठौर जलजंत्र जाल बंगला उसीर के।
हौद भरे केसरि गुलाब सौरभ कि भीर के।।४३।।

कुञ्जगली कुसुमित रसाल बहुभाँति सुहाई।
फरस सुलपहे सरस अतरवर सौं छिमकाई।।४४।।

सब ऋतु संत वसन्त लसत दूनी छवि दिन–दिन।
सीतल मंद सुगंध सहित मारुत बह सब छिन।।४५।।

महा छबिन की भीर रहति नित–नव–गुलजारी।
जनु रतिपति–नृप नित विहार की निज फुलवारी।।४६।।

या वन की बानिक समान पावनहि निकाई।
जाकी छबि की छटा छलकि छबि सब वन छाई।।४७।।

मनमथ मदन मनोज मार मकरध्वज माली।
उज्ज्वलरस सौं सींचि करत रचिपचि रखवाली।।४८।।

चित्रित चित्र विचित्र महल झुकि रहे झरोखे।
छज्जे दरवज्जे कपाट फटिकन के गोखे।।४९।।

मनि मानिक जगमगत जोति जित–तित विस्तारत।
बहुत दृगनि करि भवन जुगल–छबि मनहुँ निहारत।।५०।।

द्वारनि बंदनवार बनी गजमुक्तनि भारी।
विहँसत है जनु सदन रदन दुति लगत उज्यारी।।५१।।

ऊपर ही रति–कलस धुजा फहरति पचरंगी।
मनु कारीगर कामसदन सिर धरी कलंगी।।५२।।

परसत रवि शशि रसमिस रसदुति जगमगात यौं।
वन घन में दामिनि स्वरूप इकरस राजत ज्यौं।।५३।।

घनसारनि के घनेसार घसि अंगन लिपाये।
गावति मंगलचार सखीगन बजत बधाये।।५४।।
साएवान सुवितान तनें बादिले झलाझल।
जरकस परदा परे बिछे मृदु गिलम सु मखमल।।५५।।
बहुत सुगंधनि धूप दीप बहु रतन दिखावत।
निसिदिन होत प्रकास तिमिर कहुँ रहन न पावत।।५६।।
रंगमहल की छबि अनूप कछु कही न जाई।
अखिलभुवन–सिरमौर सहज जाकी ठकुराई।।५७।।
मनि–मण्डल मुक्ता मयूखमधि रतन सिंघासन।
सरस सुवासनि सहित कमल दल को मनु आसन।।५८।।
तहँ राजत दोउ मीत प्रीति सौं नित सुखदानी।
रसिकराज महाराज राधिका श्रीमहारानी।।५९।।
प्रीतम सुन्दर श्याम प्रिया छबि फबी गुराई।
मनु सिंगार–रस संग सिंगार किय सुन्दरताई।।६०।।
दोउ परस्पर प्रतिबिंबित अद्भुत छबि छाजत।
गौर–श्याम मिलि हरित होत उपमा सब लाजत।।६१।।
चटकीले पट नील–पीत फरहरत सुहाये।
रस बरसन को उनै मनहुँ घन–दामिनि आये।।६२।।
दोउ तन दर्पन अंग–अंग प्रतिबिम्बित सरसें।
दुगुन तिगुन चौगुन अनेक गुन भूषन दरसें।।६३।।
अँग सँग विहरत कुञ्जविहारिनि कुञ्जविहारी।
दामिनि-घन रति–काम कनक–मनि छबि पर वारी।।६४।।

जावक रंग सुरंग अरुण महमृदु तिय–पदतल।
पिय-हिय को अनुराग लग्यो जनु प्रणवत पल–पल।।६५।।

अरुणचरण–तल चिन्ह चारु जगमगत विराजें।
मो मन के अभिलाष लगे जनु पदरज काजें।।६६।।

चम्पकली अंगुली भली नखचन्द जुन्हाई।
सखिजन–नैन चकोर निरखि रहै इकटक लाई।।६७।।

अमल अमोल अनोट बीछिया शब्दित ऐसे।
कूजत कल कलहंस प्रभा के निधि में जैसे।।६८।।

कमल–चरण नूपुर जराइ के राजत गाजत।
मनहुँ सुरति संग्राम विजय के बाजे बाजत।।६९।।

गुलफ–गुलाबप्रसून निरखि अलि पियमति भूली।
अतलस अतरोटा अनूप नीवी मखतूली।।७०।।

अति सूक्षम कटितट सुदेस मनि किंकिनि–जाला।
मदन–सदन के द्वार बँधी जनु बन्दनमाला।।७१।।

रस–सर उदर तरंग उमगि त्रिवली छबि छाई।
नाभिकमल अलि अवलि रोमावलि मनु चलि आई।।७२।।

केसरि अँगिया कसें उरज उन्नत अरु गाढ़े।
कनक कवच सजि सुभट जीति रति रन जनु ठाढ़े।।७३।।

विमल सजल कल मुक्तमाल उर रुरति उदारा।।
मनु सुमेरु के शृंग जुगलबिच सुरसरि धारा।।७४।।

उरसि उरवसी मध्य अरुन नग यौं छबि छाजत।
तिय–हिय को अनुराग विदित जनु बाहिर राजत।।७५।।

बलया बाजूबन्द भुजा पिय–अंसन दीने।
मनु घनस्याम स्वरूप दिव्य दामिनि कसि लीने।।७६।।

कंकन पहुँची चुरी चारु जे भूषन कर के।
आलबाल किय मनहुँ मैन माली सुरतरु के।।७७।।

कमलपानि–दल अंगुरि बुन्द मेंहदी लपटानी।
छला बजत सित मनहुँ हंस–सुत कहत कहानी।।७८।।

दुतिय हाथ लिये अमल कमल कल फूल फिरावत।
ज्यौं श्रीपति संग श्रीसुजान सुन्दर छबि पावत।।७९।।

कण्ठसरी दुलरी हीरनि धुकधुकी सुधारें।
लटकत मुक्ता मनहुँ नचत नट मदन अखारें।।८०।।

पोति–पुंज मखतूल श्रवन भूषन जगमग छवि।
मनु दुरि चल्यौ पताल तिमिर दुहुँ ओर उदित रवि।।८१।।

धसति पान की पीक लसति गोरे गल ऐसी।
ललित लाल की गुलीबन्द भूषित नव जैसी।।८२।।

कण्ठ कम्बु सम मुख प्रसन्न श्रम–जलकन नीके।
मनहुँ चन्द के लगि सुछन्द रह बुन्द अमी के।।८३।।

नीलाम्बर मधि गौरवदन सोभित सविलासा।
मनु पावस घन चीर सरदशशि कियो प्रकासा।।८४।।

उज्ज्वल मुख के आस पास छवि फबी किनारी।
चन्द चारु जनु घेरि रही नव दामिनि प्यारी।।८५।।

लज्जित चिबुक बिच सुभग श्याम लीला शोभित अनु।
गिर्‌यो गुलाब सुमन समझार मधु छक्यो मधुप मनु।।८६।।

अधर सधर मुखवास हास मृदु सिति दसनावलि।
अरुन कमल–मधि बसत सहित जनु तड़ित वज्रमिलि।।८७।।

दीपसिखा–सी नाक–मुक्त पर मुख ढिंग डोलैं।
मनहुँ चन्द की गोद चन्द को कुँवर कलोलैं।।८८।।

हँसत कपोलनि गाढ़ परति पुनि इक तिल स्यामल।
मनहुँ सुधा-सर-मध्य खिल्यो इक नील कमल कल।।८९।।

मुकुर कपोलनि श्रुतिभूषन प्रतिबिम्ब सुहाये।
अमल कमल वर वदन–अलक अलि कौतुक आये।।९०।।

कर्न तरोना तरल झलमलत नीलाँचल में।
पर्‌यौ प्रात प्रतिबिम्ब भानु जनु जमुनाजल में।।९१।।

सजल पलक सित असित लाल दृग सरस सुअञ्जन।
बनि बैठ्यौ रसराज नृपति जनु कमल सिंहासन।।९२।।

मदजोवन छकि रहे सआलस घूम घुमारे।
मदन–बान बहु कुटिल कटाच्छनि ऊपर वारे।।९३।।

कोरे चपल विशाल बहुरि भृकुटी अनियारी।
मनहुँ सकल जग जीति मदन धनुधरे उतारी।।९४।।

केसरि खौरि सुभाल गुलाली बिन्दु विराजत।
कनक–लता फल लग्यो लालनग मनु छबि छाजत।।९५।।

हीरनि बेना शीशफूल वर अरुन रतन गनि।
भाल भाग सिरपै सुहाग जनु बैठे बनि–ठनि।।६६।।

चिकुर चंद्रिका चारु जगमगाति मुख मन मोहै।
मदन–विजय की धुजा मनहुँ छबिधर पर सोहै।।६७।।

अग्रभाग पाटी असेत गुहि जुही चमेली।
दुहुंदिसि उमड़ी घटा मनहुँ बक–पाँति नवेली।।६८।।

असित केस सित मुक्त माँग गुन अरुन गुही है।
मनु सिंगार भुव सुजस प्रेम–रस–नदी बही है।।६६।।

पीठि लुरित बैनी विसाल पर वसन प्रभारम।
कदली–दल पर अलि अवली पर श्यामघटा जिम।।१००।।

सौंधे तें सतगुन सुवास सहजें अंग–अंगी।
केसरि रँग अंग रंग्यो कि अंग रंग केसरि रंगी।।१०१।।

सारीकारी सरस देह–दुति अति नव–बाला।
मनहुँ कुहू निसि मध्य दिपै दीपनि की माला।।१०२।।

श्यामघटा मधि किधैं दिव्य–दामिनि–दुति सोहै।
रसिकराय रिझवार चतुर चातक मन मोहै।।१०३।।

नखसिख अतुलित छबि सु कौन पै जाय उचारी।
जिहि लखि पिय बस भयो कियौ सरबस बलिहारी।।१०४।।

पिय-पद-पृष्ट जु श्याम अरुन तल नख सित रेनी।
मनु शोभा के सिन्धु मध्य यह ललित त्रिवेनी।।१०५।।

अंकुस कुलिश कमल जवादि मुनिजन से न्हावैं।
नूपुर बाजत मनहुं हंस कल शब्द सुनावैं।।१०६।।

गुल्फैं पिंडुरी सुलभ जुगल जंघन की शोभा।
मनु सिंगार रस मिले भले कदली के गोभा।।१०७।।

श्याम सच्चिकन देह चटक पीताम्बर पहिरैं।
मरकतमनि पर पर्खौ प्रात आतप जनु गहिरैं।।१०८।।

कटि तट किंकिनी बनी मनिनमय भूषित ऐसी।
तरु तमाल इक चमू लगी खद्योतनि कैसी।।१०९।।

सुन्दर उदर उदार ललित रोमावलि मनु अनु।
नाभि भ्रमर त्रिवली तरंग शृंगार सरित जनु।।११०।।

रस–सर उर उरबसी लसी मनु मनमथ तरनी।
कौस्तुभमनि मनु खिली भली पद्मनि छबि करनी।।१११।।

मुक्तहार सरि कंठ धुकधुकी मुक्त कलोलैं।
हंस–पाँति ढिंग हंस–सुवन जनु खेलत डोलैं।।११२।।

माल तुलसिदल विविध कुसुम मिलि सरस सवारी।
आस–पास छबि देत मनौं फूली फुलवारी।।११३।।

भाईं अवसि सुग्रीव रेख त्रिवली इमि जानौं।
कोमल स्यामल संग सरस अद्भुत इक मानौं।।११४।।

चिबुक चारु आनन प्रसन्न श्रम जल–कन जागे।
मनहुँ भोर मकरन्द–बुन्द अरविन्दहि लागे।।११५।।

मधुर मनोहर हँसनि लसनि दुति सित दसनावलि।
निकसि चन्द्र तें जोन्ह मनौ वरषति कुसुमावलि।।११६।।

इक कर मुरली अधर मधुर प्रिय नाम उचरहीं।
मनहुँ मदनमोहनी–मन्त्र पढ़ि जग बस करहीं।।११७।।

दुतियबाहु तिय अंस धरे बाजूबन्द साजे।
छवि–मन्दिर पर धुज सिंगार रस किधौं विराजे।।११८।।

कमल–पानि मनि जटित कनक पहुँची दुति भारी।
निज चर के चहुं पास रमा जनु कृत रखवारी।।११९।।

हाटक दोऊ मुखनि हरित नग लगे सुहाते।
मनहुँ कमल गल लागि पियत मधु मधुकर माते।।१२०।।

करतल सुमन गुलाब चतुर अँगुरी अँगुष्टवर।
मनहुँ पञ्चसर नृपति सुभट के सुघट पञ्चसर।।१२१।।

अँगुरी अरु अंगुष्ट मुद्रिकनि नग छबि छाजैं।
नील–कमल के दलनि मनौं खद्योत विराजैं।।१२२।।

अरुन अधरतर मुख सुवास नासिका सुहाई।
मनहुँ बिम्बफल मधुर जानि सुक तुण्ड झुकाई।।१२३।।

मुक्ता सजल सुढार विमल कल नासा दीनौं।
मनहुँ असुर गुर सुधर उदय उच्चासन कीन्हौं।।१२४।।

अधरन मुरली धरी रहीं अलकैं लपटाई।
नील कमल पर अलि अवलिन जनु कलह मचाई।।१२५।।

मकराकृत कुण्डल कर्ण लसत अति ललित कपोलनि।
मनु अगाध जल-विमल-मध्य कृत मकर कलोलनि।।१२६।।

रुचिर पलक दृग कोर अरुण सित कारे तारे।
मनहुँ कमल–दल नवल जुगल अति मधु मतवारे।।१२७।।

कुटिल कटाछैं अति आछें भ्रुव वक्र बनी अनु।
मनमथ वरषत बान तानि मनु जुग मरकत धनु।।१२८।।

केसरि तिलक लिलार बिन्दु चन्दन छबि छाजत।
मनु सुरगुरु की गोद भूमि सुत विदित विराजत।।१२९।।

सीस मुकुट मधि सेत रत्न जगमगत नवीने।
घन तें मनहुँ उदोत शरद शशि उडगन लीने।।१३०।।

मुकुट सुघट वर विमल मुक्त कल कलँगी थर हर।
मनहुँ कलस धुज धरे मदन रसराज सदन पर।।१३१।।

बेंनी बनी विसाल पीठि पर लगति सुहाई।
तरु तमाल बक अलि अवली जनु रहि लपटाई।।१३२।।

स्याम अंग अँगराग चन्दन घन सार गुराई।
जमुना जल पर जगमगाति जनु शरद जुन्हाई।।१३३।।

सहज सुवास शरीर सरस सौंधे तें सुन्दर।
भ्रमर भ्रमत चहुँओर जानि जनु नील नलिन वर।।१३४।।

पिय घनश्याम सुजान प्रिया तन गोरी भोरी।
नव जोवन गुनरूप अनूपम अद्भुत जोरी।।१३५।।

हावभाव लावण्य सरस माधुरी मनोहर।
अंग–अंग छबि पर वारि दिये दिनकर रजनीकर।।१३६।।

संग सखी सुखरासि ललित–ललिता रंगदेवी।
निरखति नित्यविहार जुगल–रस सरस सुसेवी।।१३७।।

अरु सखि सब सुख देनि रुखहि लिय मुखहिं निहारैं।
अपनी–अपनी उमग सहित सब सौंज सँवारैं।।१३८।।

सर्वसु मनकी लहैं रहैं रिझवति पिय प्यारी।
ज्यौं सेवति विमलादि सखी सिय अवधबिहारी।।१३९।।

कोउ कर लीने विमल छत्र जिहिं जगति जुन्हाई।
मनु घन दामिनि सीस शरद शशि छबि रहि छाई।।१४०।।

गजमुक्ता की लूम सुघट सज्जल उजलाई।
मनु लटकत यह चिद्विलास सुन्दर सुखदाई।।१४१।।

नील वरन दुहुँ ओर मोरछल लगत सुहाये।
नीलकण्ठ जनु नवघन तड़ित दरस हित आये।।१४२।।

दुहुँ दिशि चामर चलत सेत शोभित अरु गहरे।
मनहुँ मराल रसाल प्रभानिधि के तट बिहरे।।१४३।।

लिये अड़ानी दुहूँओर सखि छबिहि बढ़ावति।
मनु द्वै ठाढ़ी तड़ित दुँहुँनि आरसी दिखावति।।१४४।।

कोउ दर्पन कोउ व्यजन सुमन–भूषन कोउ लीने।
कोउ जराय–भूषन सम्पुट लिये जटित नगीने।।१४५।।

कोउ लीने मुक्तनि मण्डन महा मनोहर।
कोऊ लिये घनसार चार के अलंकार वर।।१४६।।

कोउ मृगमद चन्दन कपूर केसरि लीने घसि।
कोउ चोआदि गुलाब लिये सीसी भरि रही लसि।।१४७।।

अतरदान कोउ पानदान कोउ लै पिकदानी।
सुरंग वसन चुनि चारु लिये कोउ सखी सयानी।।१४८।।

कोउ नवनीत सितादि मधुर–मेवा लिये थारी।
कोउ भरि लिये सुगन्ध सीत जमुना–जल–झारी।।१४६।।

कोउ रुमाल कर–कमल वदन पर भ्रमर उड़ावति।
कोउ दुहुँकर बलिहारि लेति लखि कोउ सिरन बति।।१५०।।

कोउ कर लै सखि सुवा सारिका सुघर पढ़ावति।
फूलछरी लै खरी कोऊ इतमाम जनावति।।१५१।।

कोउ मृदंग कोउ बीन मुरज कोउ मधुर बजावति।
कोउ तमूर सारंग सितार करतार सुनावति।।१५२।।

कोउ रवाव कोउ चंग उपंग सुरंग मिलावति।
कोउ लिये ताल विधान बजति सैननि समुझावति।।१५३।।

कोउ अलापि सुरसप्त पञ्च मधुरे मिलि गावति।
कोउ ऊँचे सुर तान तरंगनि रंग बढ़ावति।।१५४।।

कोउ नूपुर सजि सुढंग नचति कोउ सुघर नचावति।
बटा उछारत कोऊ चकई कोउ लट्टू फिरावति।।१५५।।

कोउ सखि छन्द प्रबन्ध काव्य उघटत सरसाई।
सुधमुद्रा लै सुरति ग्राम मूर्छना मिलाई।।१५६।।

आरोही अवरोही अरु थाई संचारी।
दुरनि मुरनि मुरकनि चितवनि हस्तनि छबि न्यारी।।१५७।।

कोक कला संगीत राग–रागिनि गति जेती।
अभिनव मूरतिवन्त सुघर सखि दिखवति तेती।।१५८।।

हावभाव आलम्ब उदीपन सरस निकाई।
सेवति धरि–धरि रूप जाति जेतिक मधुराई।।१५९।।

नृत्य–गीत वाजंत्र सकल मिलि यौं धुनि साजैं।
महामोहनी मदनमन्त्र मनु अद्भुत बाजैं।।१६०।।

रीझि खवासिन अपन वसन भूषन दोउ देहीं।
सखि–सभाग अति उमगि सीस सादर धरि लेहीं।।१६१।।

ज्यौं चिन्तामनि सुरतरु देत मनोरथ सरसैं।
त्यौं जुगकमल पराग सुगन्ध अलिकुल हित बरसैं।।१६२।।

कोउ सखि छबि लखि रीझिरही टकटकी न टारैं।
कोउ सिर चालन करति रीझि कोउ सर्वस वारैं।।१६३।।

राई लौन उतारि कोउ छबि पर तृन तोरति।
कोउ काहू कछु बात कहति कोउ हँसि मुख मोरति।।१६४।।

ऐसे चरित अनेक एक मुख कहे न जाई।
ज्यौं तारागन चन्द्रभानु नहिं मुठी समाई।।१६५।।

श्यामा–श्याम सुजान सखिन की सभा सुहाई।
मनु छबि रीझि रसाल माल बन को पहिराई।।१६६।।

सखिन मध्य नित प्रिया संग पिय शोभित ऐसे।
सब सक्तिन मधि श्रीसमेत पुरुषोत्तम जैसे।।१६७।।

जिन पद-नख-छबि-छटा कोटि शशि सूरज सोहैं।
तिन समान उपमान आन या जग में कोहैं।।१६८।।

जेतिक उपमा कही सही परि सम नहीं लेखैं।
ज्यौं झीने पट मधि अमोल नग सुघर परेखैं।।१६९।।

अखिल विश्वव्यापक ब्रह्म जिनकी उजियारी।
सो वृन्दावन–चन्द्र सदा श्रीकुञ्जबिहारी।।१७०।।

जहँ नित-नव खग मृग लतादि सखि सकल रसिकजन।
ह्वै ह्वै रूप अनूप दुहुँनि सेवत अति दृढ़–मन।।१७१।।

महा मनोहर मही मुकुर–मनि–मय सब ठाँहीं।
प्रतिबिम्बित सब शोभ दुतिय बन जनु भुव माँहीं।।१७२।।

नित अनुराग सुहाग भाग आनन्दमई है।
नित रसरीति प्रतीति प्रीति नित नई–नई है।।१७३।।

नित सुखसार बिहार सखी नित दरसन पावैं।
बिन सखियन की कृपा आन कोउ जान न पावैं।।१७४।।

जहाँ जिती जे वस्तु अलौकिक नित–नव सोहैं।
सब सोभा कहि सकैं सुकवि या जग में कोहैं।।१७५।।

मन भर चाँवर चारु सुघर घट इक मधि सीझत।
इक कन लै दृढ़ तोरि ताहि सम सब लखि लीजत।।१७६।।

तैसेहि यह रस कथा यथामति कछु इक गाई।
इक मच्छर ज्यौं सब अकाश की थाह न पाई।।१७७।।

ऊख पयूष मधूनि आदि जग जिती मिठाई।
ते सब नीरस यहै मधुर रस सरस निकाई।।१७८।।

स्वर्ग सुधा-रस पिये छीन तप भुव पर परई।
प्रेम सुधारस पिये जुगल नित दरसन करई।।१७९।।

प्रेम सुधानिधि महामधुर कोउ पार न पाहै।
अलप मीन मन मोर ताहि किहि विधि अवगाहै।।१८०।।

जलधर-धार अनेक एक चातक किमि पीवै।
कछु जल-मन मुख परे सु लै सुख पावै जीवै।।१८१।।

चन्द्र चारु बहु इक चकोर छबि किहि विधि गावत।
निरखि हरखि हिय थकित रहत कछु कहत न आवत।।१८२।।

रसना के दृग नहीं दृगनि के रसना नाहीं।
कहै सु लखि नहिं सकै लखे जेहि कहे न जाहीं।।१८३।।

तौ कहिये किहि भाँति प्रभा सब सुख के साधा।
ढीठौ दै कछु कही रसिक छमियो अपराधा।।१८४।।

यहै परम माधुर्यध्यान सर्वोपरि जानौं।
गोप्य गोप्य अति गोप्य भूलि जनि प्रगट बखानौं।।१८५।।

यहै निरन्तर ध्यान धरत कैलाश–निवासी।
इहि वनसखि ह्वै दीप दिखावत करत खवासी।।१८६।।

यहै ध्यान ब्रह्मादि धरैं सादर सिर नावै।
इन्द्रादिक है तुच्छ आन की कवन चलावै।।१८७।।

शुक, सनकादिक, नारदादि, व्यासादिक गावैं।
शारद, शेष, गनेश, आदि कोउ पार न पावैं।।१८८।।

आगम निगम पुरान आदि नित नेति बखानैं।
ता महिमा को अलप बुद्धि इक जन क्यों जानैं।।१८९।।

श्रीगुरु श्रीहरिव्यासदेव के शरणै आयो।
तिनकी कृपा सुदृष्टि यथामति रस जस गायो।।१९०।।

महापतित महाकृपन कुटिल सठ क्रोधी कामी।
सो लीनो अपनाइ कृपानिधि श्रीगुरुस्वामी।।१९१।।

जेसे पारस परसि लोह कंचन तन धरई।
ज्यौं चन्दन की पवन नीम पुनि चन्दन करई।।१९२।।

श्रीगुरु की महिमा अनन्त कछु कही न जाई।
जिन घर सिर धरि वासुदेव लकरी पहुँचाई।।१९३।।

सब–देवन के देव सदा गुरुदेव कहावैं।
इन्हैं छाँड़ि के महामूढ़ जो औरै ध्यावैं।।१९४।।

निज-सुख-हित 'रस-जुगल-माधुरी' चरित बनायौ।
रसिकनहित सों दियौ विमुख सौं महा दुरायौ।।१९५।।

जे जन रसिक चकोर–मीन–चातक–व्रतधारी।
ते भल इहि मग चलैं आन कोउ नहिं अधिकारी।।१६६।।

जिनके यह रससार आनरस सुन्यौ न भावै।
ते नित ये सुख लहैं आन सपने नहिं पावै।।१६७।।

यहै अगम आधार सुगम साधन किमि होइ।
श्रीगुरु श्रीहरिव्यास–कृपा बिनु लहै न कोई।।१६८।।

'रसिक गुविन्द' सखिचरन सरन दिन दरसन पावै।
जय जय श्रीगुरुदेव यहै सुख दृगन दिखावै।।१६६।।

दोहा –

यह अगाध निधि मधुर रस, छबि कछु कही न जाइ।
चटक चहै सब ही पियौ, पै इक बूँद समाइ।।१।।
यहै युगल–रस–माधुरी, सादर लहै जु कोइ।
प्रेमभक्ति सब सुख सदा, 'श्रीगोविन्द' तेहि होइ।।२।।